ओ३म्

वैदिक संस्कृति का उद्घोषक

वैदिक सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का साप्ताहिक मुख-पत्र

शुल्क :- एक प्रति 5 रुपया (भारत में) वार्षिक 250 रुपये तथा आजीवन 2500 रुपये

वर्ष 14 अंक 40 कुल पृष्ठ-8 15 से 21 अगस्त, 2019 दयानन्दाब्द 194 सृष्टि सम्वत् 1960853120 सम्वत् 2076 श्रा. शु.-15

आर्य प्रतिनिधि सभा, अमेरिका के तत्वावधान में 29वाँ आर्य महासम्मेलन शिकागो में भव्यता के साथ सम्पन्न

युवाओं तथा महिलाओं को केन्द्रित कर किये गये प्रेरणास्पद तथा आकर्षक आयोजन

अमेरिका में आर्य समाज की महान विभूति डॉ. सुखदेव चन्द सोनी को 85वें जन्म दिवस के अवसर पर दी गई शुभकामनाएँ

आर्य प्रतिनिधि सभा, अमेरिका के तत्वावधान में 29वाँ आर्य महासम्मेलन, आर्य समाज शिकागो के आतिथ्य पर शिकागो के हयात रिजेंसी होटल में 25 से 28 जुलाई, 2019 तक अत्यन्त उत्साहपूर्ण वातावरण में सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गया। इस महासम्मेलन में देश–विदेश के लगभग 350 आर्य बुद्धिजीवी, नेतागण, संन्यासी तथा विद्वानों ने भाग लिया। अमेरिका के विभिन्न प्रदेशों से पधारे आर्य समाज के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त भारत से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी, अनेकों गुरुकुलों के संस्थापक तथा गुरुकुल गौतमनगर के आचार्य स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी, स्वामी सम्पूर्णानन्द जी करनाल, प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् तथा वैदिक मिशन मुम्बई के अध्यक्ष आचार्य सोमदेव शास्त्री जी, आचार्य धर्मपाल शास्त्री जी, बेटी बचाओ अभियान की अध्यक्षा बहन पूनम आर्या तथा संयोजक बहन प्रवेश आर्या, आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई के मंत्री श्री अरुण अबरोल, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री श्री विनय आर्य, गुरुकुल करतारपुर के प्रधान श्री ध्रुव मित्तल, श्री धर्मवीर सिंह पानीपत आदि भी पधारे।

सम्मेलन का शुभारम्भ 25 जुलाई, 2019 को सायं 6 बजे हुआ। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा अमेरिका के संस्थापक महात्मा गिरीश खोसला जी वानप्रस्थ ने गणमान्य महानुभावों का स्वागत किया तथा विद्वानों का परिचय कराया। रात्रि 10 बजे तक चले इस कार्यक्रम में अनेकों अन्य कार्यक्रम भी आयोजित किये गये तथा विद्वानों के प्रवचन भी हुए। दिनांक 26 जुलाई, 2019 को प्रातः योग कक्षा के पश्चात् संन्ध्या यज्ञ आदि का कार्यक्रम रहा उसके उपरान्त 9.15 बजे ध्वजारोहण का अत्यन्त आकर्षक कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। ध्वजारोहण का दायित्व बच्चों तथा युवाओं ने अत्यन्त कुशलतापूर्वक निभाया। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा अमेरिका के प्रधान श्री विश्रुत आर्य ने अपने उद्बोधन से आगन्तुक प्रतिनिधियों एवं अतिथियों का स्वागत किया।

आर्य महासम्मेलन में समय–समय पर भारत से पधारे आर्य संन्यासियों, विद्वानों तथा नेताओं के आध्यात्मिक प्रवचन एवं व्याख्यान भी होते रहे जिससे अमेरिका के लोगों ने मार्गदर्शन प्राप्त करते हुए अत्यन्त विश्वास के साथ आर्य समाज के स्वर्णिम भविष्य की रूपरेखा के दर्शन किये।

इस अवसर पर उद्बोधन देते हुए आचार्य सोमदेव शास्त्री जी ने अपने प्रेरणादाई उद्बोधन में श्रोताओं को वेद ज्ञान से तृप्त किया। उन्होंने कहा कि जीवन की सभी समस्याओं को दूर करने के लिए वेद में स्वर्णिम सूत्र प्रदान किये गये हैं। इनको पढ़कर और अपने जीवन में उतारकर हम स्वर्णिम भविष्य प्राप्त कर सकते हैं।

अनेकों गुरुकुलों के संस्थापक स्वामी प्रणवानन्द जी ने युवा पीढ़ी में वैदिक संस्कृति का बीजारोपण करने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि गुरुकुलों के द्वारा हम अपने बच्चों को उच्च संस्कार प्रदान कर सकते हैं जिन्हें प्राप्त करके वे अपने जीवन को मंगलमय बना सकते हैं।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री श्री विनय आर्य ने अपने उद्बोधन में आर्य समाज को आगे बढ़ाने के सूत्र बताते हुए अमेरिका में चल रही गतिविधियों की प्रशंसा की।

आर्य प्रतिनिधि सभा, मुम्बई के मंत्री श्री अरुण अबरोल ने अपने अनुभवजन्य उद्बोधन से आर्यों को आनन्दित किया।

स्वामी सम्पूर्णानन्द ने यज्ञ एवं अन्य पूजा पद्धतियों की समीक्षा करते हुए अपना प्रभावशाली प्रवचन दिया। उन्होंने यज्ञ को सर्वश्रेष्ठ कर्म बताते हुए सभी को प्रतिदिन यज्ञ करने की प्रेरणा दी। उन्होंने कहा कि यज्ञ हमें त्याग, समर्पण तथा अन्यों का सम्मान करना सिखाता है। परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ पूजा पद्धति यज्ञ ही है।

सम्मेलन में अत्यन्त विद्वतापूर्ण तथा ओजस्वी व्याख्यान देते हुए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पूज्य स्वामी आर्यवेश जी ने जहाँ भारत में आर्य समाज के बढ़ते

क्रिया–कलापों का दिग्दर्शन कराया वहीं उन्होंने अमेरिका के आर्यजनों का धन्यवाद भी किया कि वे अत्यन्त निष्ठा के साथ आर्य समाज के प्रचार–प्रसार में लगे हुए हैं और महर्षि दयानन्द के स्वप्नों को साकार कर रहे हैं। स्वामी जी ने वैदिक संस्कारों की चर्चा करते हुए कहा कि बच्चों को जन्म से ही संस्कार देने का प्रयास किया जाना चाहिए क्योंकि बचपन में प्राप्त संस्कार सारा जीवन उनका मार्गदर्शन करते रहते हैं। उन्होंने कहा कि वेद में हमें यह निर्देश दिया गया है कि 'मनुर्भव जनया दैव्यम् जनम्' अर्थात् वास्तविक मनुष्य बनो और दिव्य संन्तानों को पैदा करो। उन्होंने कहा कि स्पष्ट है कि मानव योनि प्राप्त कर लेने मात्र से कोई मनुष्य नहीं बन जाता, उसके लिए विशेष प्रयास करने पड़ते हैं। मनुष्यता के पर्याय दिव्य गुणों को धारण करना पड़ता है। मनुष्य का मानस इस तरह का निर्माण करना पड़ेगा, उसके आस–पास का वातावरण इस प्रकार से निर्मित करना पड़ेगा कि वह बुराईयों से दूर हटकर भद्र को ग्रहण करने में तत्पर रहे। स्वामी जी ने इस भव्य आर्य महासम्मेलन को सफल बनाने के लिए अमेरिका के पुरुषार्थी कार्यकर्ताओं को साधुवाद दिया। उन्होंने कहा कि अमेरिका में आर्य समाज के इतने उज्ज्वल पक्ष को देखकर अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

विभिन्न कार्यक्रमों में श्री अनिल खन्ना, श्रीमती सुलक्षणा, श्रीमती शशि टंडन, श्रीमती श्वेता भाटिया आदि ने अपने मनोहारी भजनों से पूरे

शेष पृष्ठ 5 पर

सम्पादक - प्रो. विट्ठलराव आर्य

उपासना और मूर्तिपूजा

– स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

वेद में मूर्तिपूजा का विधान नहीं है। वेद तो घोषणापूर्वक कहते हैं –

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यश। (यजुर्वेद 32.3)

अर्थात् जिसका नाम महान यशवाला है उस परमात्मा की कोई मूर्ति, तुलना, प्रतिकृति प्रतिनिधि नहीं है।

प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस देश में मूर्तिपूजा कब प्रचलित हुई और किसने चलाई?

महर्षि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में प्रश्नोत्तर रूप में इस सम्बन्ध में लिखते हैं –

प्र. मूर्तिपूजा कहां से चली?

उ. जैनियों से।

प्र. जैनियों ने कहां से चलाई?

उ. अपनी मूर्खता से।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार, मूर्तिपूजा बौद्धकाल से प्रचलित हुई। वे लिखते हैं – ''यह एक मनोरंजक विचार है कि मूर्तिपूजा भारत में यूनान से आई। वैदिक धर्म हर प्रकार की मूर्ति तथा प्रतिमा-पूजन का विरोधी था। उस काल (वैदिकयुग) में देवमूर्तियों के किसी प्रकार के मंदिर नहीं थे। ....प्रारम्भिक बौद्ध धर्म इसका घोर विरोधी था ..... पीछे से स्वयं बुद्ध की मूर्तियाँ बनने लगी। फारसी तथा उर्दू भाषा में प्रतिमा अथवा मूर्ति के लिए अब भी बुत शब्द प्रयुक्त होता है जो बुद्ध का रूपांतर है।'' (हिन्दुस्तान की कहानी पृ. 172)

''नहीं, नहीं मूर्तिपूजा सीढ़ी नहीं किन्तु एक बड़ी खाई है जिसमें गिरकर मनुष्य चकनाचूर हो जाता है, पुनः इस खाई से निकल नहीं सकता किन्तु उसी में मर जाता है।

एक अन्य स्थल पर वे लिखते हैं –

''ग्रीस और यूनान आदि देशों में देवताओं की मूर्तियां पुजती थीं। वहाँ से भारत में मूर्तिपूजा आई। बौद्धों ने मूर्तिपूजा आरम्भ की। फिर अन्य जगह फैल गई।'' (विश्व इतिहास की झलक – पृ. 694)

इन उद्धरणों से इतना निश्चित है कि मूर्तिपूजा हमारे देश में जैन-बौद्धकाल से आरम्भ हुई। जिस समय भारत में मूर्तिपूजा आरम्भ हुई और लोग मन्दिरों में जाने लगे तो भारतीय विद्वानों ने इसका घोर खण्डन किया। मूर्तिपूजा खण्डन में उन्होंने यहाँ तक कहा –

गजैरापीड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैनमन्दिरम् (भविष्य पु. प्रतिसर्गपर्व 3-28-53) अर्थात् यदि हाथी मारने के लिए दौड़ा आता हो और जैनियों के मन्दिर में जाने से प्राणरक्षा होती हो तो भी जैनियों के मन्दिर में नहीं जाना चाहिए।

लेकिन ब्राह्मणों, उपदेशकों और विद्वानों के कथन का साधारण जनता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और उन लोगों ने भी मन्दिरों का निर्माण किया। जैनियों के मन्दिरों में नग्न मूर्तियाँ होती थी। इन मन्दिरों में भव्यवेश में भूषित हार-श्रृंगारयुक्त मूर्तियों की स्थापना और पूजा होने लगी।

भारत में पुराणों की मान्यता है लेकिन पुराणों में भी मूर्तिपूजा का घोर खण्डन किया गया है।

यस्यात्मबुद्धि कुणपे त्रिधातुके। स्वधी कलत्रादिषु भौम इज्यधी॥

यत्तीर्थबुद्धिः सलिले न कहिर्चिज्। जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखारः॥ (श्रीमद भागवत 10-84-13)

अर्थात् जो वात, पित और कफ तीन मलों से बने हुए शरीर में आत्मबुद्धि रखता है, जो स्त्री आदि में स्वबुद्धि रखता हैं, जो पृथ्वी से बनी हुई पाषाण मूर्तियों में पूज्य बुद्धि रखता है, ऐसा व्यक्ति गोखर गौओं का चारा उठाने वाला गधा है।

न हयम्मयानि तीर्थानि न देवा मृच्छिलामया।

ते पुनन्त्यापि कालेन विष्णुभक्ताः क्षणादहो॥ (देवी भागवत 9-7-42)

अर्थात्, पानी के तीर्थ नहीं होते तथा मिट्टी और पत्थर के देवता नहीं होते। विष्णुभक्त तो क्षण मात्र में पवित्र कर देते हैं। परन्तु वे किसी काल में भी मनुष्य को पवित्र नहीं कर सकते।

दर्शन शास्त्रों में भी मूर्तिपूजा का निषेध है

न प्रतीके न ही सः (वेदान्त दर्शन 4-1-4)

अर्थात् – प्रतीक में, मूर्ति आदि में परमात्मा की उपासना नहीं हो सकती, क्योंकि प्रतीक परमात्मा नहीं है।

संसार के सभी महापुरुषों और सुधारकों ने भी मूर्तिपूजा का खण्डन किया है।

श्री शंकराचार्य जी परपूजा में लिखते हैं –

पूर्णस्यावाहनं कुत्र सर्वाधारस्य चासनम्।
स्वच्छस्य पाद्यमघर्यं च शुद्धस्याचमनं कुतः॥
निर्लेपस्य कुतो गन्धं पुष्पं निर्वसनस्य च।
निर्गन्धस्य कुतो धूपं स्वप्रकाशस्य दीपकम॥

अर्थात्, ईश्वर सर्वत्र परिपूर्ण है फिर उसका आह्वान कैसा?जो सर्वाधार है उसके लिए आसन कैसा?जो सर्वथा स्वच्छ एवं पवित्र है उसके लिए पाद्य और अर्घ्य कैसा?जो शुद्ध है उसके लिए आचमन की क्या आवश्यकता?

निर्लेप ईश्वर को चन्दन लगाने से क्या?जो सुगन्ध की इच्छा से रहित है उसे पुष्प क्यों चढ़ाते हो?निर्गन्ध को धूप क्यों जलाते हो?जो स्वयं प्रकाशमान है उसके समक्ष दीपक क्यों जलाते हो?

चाणक्य जी लिखते हैं –

अग्निहोत्र करना द्विजमात्र का कर्त्तव्य है। मुनि लोग हृदय में परमात्मा की उपासना करते हैं। अल्प बुद्धि वाले लोग मूर्तिपूजा करते हैं। बुद्धिमानों के लिए तो सर्वत्र देवता है।

(चाणक्य नीति 4-19)

कबीरदास जी कहते हैं ...

पाहन पूजे हरि मिले तो हम पूजे पहार।
ताते तो चाकी भली पीस खाए संसार॥

दादु जी कहते हैं –

मूर्त गढ़ी पाषण की किया सृजन हार।
दादू सांच सूझे नहीं यूं डूबा संसार॥

गुरुनानकदेव जी का उपदेश है –

पात्थर ले पूजहि मुगध गंवार।
ओहिजा आपि डूबो तुम कहा तारनहार॥

कुछ अज्ञात लोगों के कथन –

पत्थर को तू भोग लगावे वह क्या भोजन खावे रे।
अन्धे आगे दीपक बाले वृथा तेल जलावे रे॥
यह क्या कर रहे हो किधर जा रहे हो।
अंधेरे में क्यों ठोकरें खा रहे हो॥
बनाया है स्वयं जिसको हाथों से अपने।
गजब है! प्रभु उसको बतला रहे हो॥
बुतपरस्तों का है दस्तूर निराला देखो।
खुद तराशा है मगर नाम खुदा रखा है॥
सच तो यह है खुदा आखिर खुदा है और बुत है बुत।
सोच! खुद मालूम होगा यह कहाँ और वह कहाँ॥

महर्षि दयानन्द जी का कथन –

''मूर्ति जड़ है, उसे ईश्वर मानोगे तो ईश्वर भी जड़ सिद्ध होगा। अथवा ईश्वर के समान एक और ईश्वर मानों तो परमात्मा का परमात्मापन नहीं रहेगा। यदि कहो कि प्रतिमा में ईश्वर आ जाता है तो ठीक नहीं। इससे ईश्वर अखण्ड सिद्ध नहीं हो सकता। भावना में भगवान् है यह कहो तो मैं कहता हूँ कि काष्ठ खण्ड में इक्षु दण्ड की और लोष्ठ में मिश्री की भावना करने से क्या मुख मीठा हो सकता है?मृगतृष्णा में मृग जल की बहुतेरी भावना करता है परन्तु उसकी प्यास नहीं बुझती है। विश्वास, भावना और कल्पना के साथ सत्य का होना भी आवश्यक है।'' (दयानन्द प्रकाश – पृ. 264)

प्रश्न – मूर्ति पूजा सीढ़ी है। मूर्तिपूजा करते-करते मनुष्य ईश्वर तक पहुँच जाता है।

उत्तर – मूर्तिपूजा परमात्मा प्राप्ति की सीढ़ी नहीं है। सीढ़ी तो गंतव्य स्थान पर पहुँचने के पश्चात् छूट जाती है परन्तु हम देखते हैं कि एक व्यक्ति आठ वर्ष की आयु में मूर्तिपूजा आरम्भ करता है और अस्सी वर्ष की अवस्था में मरते समय तक भी इसी दलदल से निकल नहीं पाता।

एक बच्चा दूसरी कक्षा में पढ़ता है, उसे पांच और छः का जोड़ करना हो तो वह पहले स्लेट अथवा कापी पर पांच लकीरें खींचता है फिर उसके पास छः लकीरें खींचता है, उन्हें गिनकर वह ग्यारह जोड़ प्राप्त करता है। परन्तु तीसरी अथवा चौथी कक्षा में पहुंचने पर वह उंगलियों पर गिनने लग सकता है और पांचवीं-छठी कक्षा में पहुंचकर वह मानसिक गणित से ही जोड़ लेता है। यदि मूर्तिपूजा सीढ़ी होती तो मूर्तिपूजक उन्नति करते-करते मन में ध्यान करने लग जाते परन्तु ऐसा होता नहीं है, अतः महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है :-

''मूर्ति जड़ है, उसे ईश्वर मानोगे तो ईश्वर भी जड़ सिद्ध होगा। अथवा ईश्वर के समान एक और ईश्वर मानों तो परमात्मा का परमात्मापन नहीं रहेगा। यदि कहो कि प्रतिमा में ईश्वर आ जाता है तो ठीक नहीं। इससे ईश्वर अखण्ड सिद्ध नहीं हो सकता। भावना में भगवान् है यह कहो तो मैं कहता हूँ कि काष्ठ खण्ड में इक्षु दण्ड की और लोष्ठ में मिश्री की भावना करने से क्या मुख मीठा हो सकता है?मृगतृष्णा में मृग जल की बहुतेरी भावना करता है परन्तु उसकी प्यास नहीं बुझती है। विश्वास, भावना और कल्पना के साथ सत्य का होना भी आवश्यक है।''

''नहीं, नहीं मूर्तिपूजा सीढ़ी नहीं किन्तु एक बड़ी खाई है जिसमें गिरकर मनुष्य चकनाचूर हो जाता है, पुनः इस खाई से निकल नहीं सकता किन्तु उसी में मर जाता है।

सत्यार्थ प्रकाश , एकादश समुल्लास)

ईश्वर प्राप्ति की सीढ़ी तो है महर्षि पतंजलि कृत – ''अष्टांग योग'' – जिसके अंग – यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि है। विद्वान, ज्ञानी और योगीजन ईश्वर प्राप्ति की सीढ़ियाँ हैं, पाषाण आदि नहीं।

(साभार स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती कृत उपासना और मूर्ति पूजा)

वेद ही क्यों

– पं. क्षितीश कुमार वेदालंकार

संसार के सभी मत वाले अपने–अपने धर्म ग्रन्थों को ईश्वरीय ज्ञान कहते हैं, तब प्रश्न उठता है कि वेद ही क्यों? इस प्रश्न का सुलझा उत्तर आर्य समाज के उच्च कोटि के विद्वान्, वक्ता और पत्रकार लेखक की लेखनी से पढ़िए। –सम्पादक

इस प्रश्न को उपस्थित करने वाले दो प्रकार के वर्ग हैं। एक वर्ग को हम आस्तिक या धार्मिक लोगों का वर्ग कह सकते हैं और दूसरे वर्ग को नास्तिक या अधार्मिक लोगों का वर्ग।

जो नास्तिक या अधार्मिक लोग हैं वे तो ईश्वर या धर्ममात्र के विरोधी हैं। उनकी दृष्टि में सभी धर्मग्रन्थ त्याज्य हैं, इसलिए वे किसी भी धर्मग्रन्थ के गुणावगुण पर विचार करने को भी तैयार नहीं, परन्तु जो धार्मिक लोग हैं, वे भी नाना सम्प्रदायों और अनेक मत–मतान्तरों में बंटे हुए हैं और हरेक मतवादी अपने ही धर्मग्रन्थ को सर्वश्रेष्ठ मानता है। ऐसा मानना स्वाभाविक भी है। मतवादियों को अपने मत से मोह होता ही है। इस मोह के वशीभूत होकर यदि कोई अपने मत को अन्य मतों से तथा अपने धर्म ग्रन्थ को अन्य धर्मग्रन्थों से उत्कृष्ट समझें तो इसे अनुचित कैसे कहा जाये? प्रत्येक माता को अपना पुत्र ही संसार में सबसे सुन्दर लगता है न।

विभिन्न मतवादी लोग अपने मत की उत्कृष्टता सिद्ध करने में इस सीमा तक आगे बढ़ गये हैं कि वे अपने धर्मग्रन्थ को ही ईश्वर कृत मानते हैं और अपने धर्मग्रन्थ की भाषा को भी ईश्वरीय या दैवीय भाषा मानते हैं। प्राचीन यहूदी लोगों का विश्वास था कि परमात्मा को केवल हिब्रू भाषा ही आती है, उसी हिब्रू भाषा में उसने संसार को धर्म का उपदेश दिया। जैनी लोग चिरकाल तक यह मानते रहे हैं कि तीर्थंकरों की भाषा केवल मागधी थी। यही दिव्य भाषा है इसलिए उसी में उपदेश दिया गया है। यहाँ तक कि उनके विश्वास के अनुसार संसार भर के पशु–पक्षी भी मगधी भाषा ही जानते हैं।

अधार्मिक या नास्तिक लोगों की बात फिलहाल छोड़ दें। उनकी आवाज में जितना कोलाहल का जोर है उतना तर्कों का औचित्य नहीं। नास्तिकता एक फैशन बन गया है और फैशन तर्कातीत होता है, परन्तु जो आस्तिक हैं और धार्मिक हैं, उनमें भी परस्पर इतने मतभेद हैं कि बहुत बार इनकी परस्पर सिर फुटव्वल देखकर यही मन में आता है कि इनसे तो नास्तिक ही अच्छे।

परन्तु नास्तिकता से भी मनुष्य की बुद्धि को सन्तोष नहीं होता। वह ऊहापोह करती ही रहती है। मनुष्य के मन में मोह का समावेश भी होता ही रहता है – परन्तु उस मोह के कारण क्या वह इतना अन्धा हो जाये कि सत्य और असत्य तथा न्याय और अन्याय में विवेक करना भी छोड़ दे।

तो फिर सत्य को पहचानने का उपाय क्या है? हरेक धर्मावलम्बी अपने धर्मग्रन्थ के ही सर्वश्रेष्ठ होने का दावा करे तो उन दावों की परीक्षा कैसे की जाये?

एक अचूक उपाय

इसका उपाय बड़ा सरल है। कोई भी इतिहास का विद्यार्थी यदि अपनी आंखों पर से पक्षपात की ऐनक उतार कर संसार भर के धर्मग्रन्थों का अध्ययन करे तो वह एक बात देखकर चकित रह जायेगा। उसे उन सब धर्मग्रन्थों की कुछ बातों में परस्पर समानता प्रतीत होगी। (यहाँ यह कहने का हमारा अभिप्राय नहीं है कि सब धर्मग्रन्थों में सब बातें समान हैं। परस्पर विरोध भी है, भयंकर विरोध है। पर कुछ बातें मिलती–जुलती अवश्य हैं। इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता।) यह समानता मानव बुद्धि की समान चिन्तन प्रणाली की द्योतक है। यदि ऐसी बात न होती तो अच्छी बात को सारा संसार अच्छा और बुरी बात को सारा संसार बुरा न कहता। न्याय और अन्याय की कसौटी भी नहीं रहती।

सहज और सरल उपाय यही है कि सब धर्मग्रन्थों में जितनी बातें समान हैं उन्हें एकत्र कर लीजिए और जिन बातों में परस्पर विरोध है, उन्हें छोड़ दीजिए। सब धर्मग्रन्थों की परस्पर समान बातें ही धर्म हैं, ग्राह्य हैं, आदेय हैं और परस्पर विरुद्ध बातें अधर्म हैं, अग्राह्य हैं और हेय हैं।

स्वभावतः प्रश्न होगा कि वेद ही क्यों इस प्रश्न के साथ उक्त कथन की क्या संगति है? उत्तर से पहले हम पूछते हैं कि विभिन्न धर्मग्रन्थों से चुन–चुनकर जो परस्पर समान बातें आपने एकत्र की हैं – जिन्हें धर्म का शुद्ध स्वरूप कहा जा सकता है, उन सबका मूल आधार क्या है?

क्या कुरान? क्या पुराण? क्या बाइबिल? क्या जेंद अवस्ता? क्या त्रिपिटक? क्या कोई अन्य धर्मग्रन्थ?

उत्तर में वितण्डा की आवश्यकता नहीं। यह सीधा इतिहास का प्रश्न है। इतिहास की शरण लीजिए और सही उत्तर को खोजिए।

संसार के समस्त इतिहासज्ञ जानते हैं कि अब से लगभग 1400 (1447) वर्ष पहले हजरत मुहम्मद साहब इस संसार में नहीं थे। जब इस्लाम के पैगम्बर ही नहीं थे तो उनके पैरोकार कहाँ से होते? कहाँ से होती उनकी कुरान? स्पष्ट है कि अब से लगभग 1400 (1447) साल पहले इस दुनियां में हजरत मुहम्मद साहब, कुरान शरीफ और इस्लाम का नाम लेने वाला कोई नहीं था, उनका अस्तित्व नहीं था।

फिर रही बाइबिल। बाइबिल को अधिक से अधिक 1966 (अब 2019) साल पुराना माना जा सकता है क्योंकि ईसा के साथ सम्बद्ध ईस्वी सन् इससे आगे बढ़ने की अनुमति नहीं देता। यद्यपि सत्य तो यह है कि बाइबिल का कोई भी भाग ईसा के समय नहीं बना था, वह उनके शिष्यों की कृति है, ठीक वैसे ही जैसे कि त्रिपिटक महात्मा बुद्ध की नहीं प्रत्युत उनके शिष्यों की कृति है। जो भी हो, बाइबिल का या न्यू टेस्टामेंट का समय और पीछे नहीं ले जाया जा सकता। जब 1966 (अब 2019) वर्ष पहले हजरत ईसा मसीह ही नहीं थे तो खीस्ती धर्म या उनका धर्मग्रन्थ बाइबिल भी कहाँ से होता।

तो क्या यहूदियों का धर्मग्रन्थ 'तनख' उस समानता का आधार है? परन्तु यहूदियों के पैगम्बर हजरत मूसा का काल 3500 वर्ष से अधिक पीछे नहीं जा सकता। स्वयं यहूदी भी वैसा ही मानते हैं। जब हजरत मूसा का ही प्रादुर्भाव नहीं हुआ था, तब यहूदी मत के प्रादुर्भाव का प्रश्न ही नहीं। इसलिए यह निर्विवाद है कि अब से लगभग 3500 वर्ष पहले संसार में यहूदी मत का अस्तित्व नहीं था।

क्या जेंदा अवस्ता पारसियों का धर्मग्रन्थ उसका आधार है? पारसी मत के प्रवर्तक हजरत जरदुश्त का समय अब से 3800 वर्ष पूर्व माना जाता है। कुछ विद्वान् हजरत मूसा और हजरत जरदुश्त की समकालीनता, परस्पर भेंट, कुछ काल तक एक ही शहर में निवास और परस्पर विचारों के विनिमय की बात को सर्वथा प्रामाणिक नहीं मानते और वे हरजत जरदुश्त का समय खींच कर 4100 साल पहले तक ले जाते हैं, परन्तु इसके आगे उनकी भी गति नहीं है। कहने का भाव यह है कि हजरत जरदुश्त और उनके द्वारा प्रचलित पारसी मत तथा उनके धर्मग्रन्थ को किसी भी हालत में 4100 वर्ष से अधिक पुराना सिद्ध नहीं किया जा सकता।

भारतीय मत – जहां तक भारत में प्रचलित मतों का प्रश्न है – उनमें बौद्ध और जैन मत प्रमुख हैं, जिनको वैदिक परम्परा से भिन्न परम्परा में गिना जा सकता है। शैव, शाक्त या वैष्णव आदि सम्प्रदाय तथा उनकी अनेकानेक शाखाएँ वैदिक परम्परा के ही अंग हैं – उनमें विकार चाहे कितना ही आ गया हो, किन्तु इन सम्प्रदायों ने वेद के प्रामाण्य का खण्डन करने का कभी साहस नहीं किया। कबीरपन्थ, नानकपन्थ अर्थात् सिख मत या राधास्वामी मत आदि मत इतने अर्वाचीन हैं कि प्राचीनों की सभा में इन अर्वाचीनों का प्रवेश समीचीन नहीं प्रतीत होता है। ब्रह्माकुमारी आदि सम्प्रदाय तो विशुद्ध गुरुडम की उपज है – ये भारतभूमि की उस उर्वरा शक्ति के द्योतक हैं जिसके कारण हर बरसात में जगह–जगह खुम्बियाँ या अन्य झाड़–झंखाड़ स्वतः उग आते हैं और किसी भी कुशल किसान को अपनी अनाज की फसल बोने से पहले खेत से उन्हें साफ करना ही पड़ता है। प्राचीनों की सभा में इन झाड़–झंखाड़ों का प्रवेश तो क्या, उन्हें दौवारिक की योग्यता का पात्र भी नहीं समझा जा सकता।

जैसे हिमालय का सर्वोच्च शिखर मानवात्मा को चुनौती देता है, जैसे महासागर की गहराइयाँ वैज्ञानिकों का आह्वान करती हैं, जैसे मंगल और चन्द्रमा आदि ग्रह–उपग्रह किसी साहसी अन्तरिक्ष यात्री की प्रतीक्षा करते हैं और मानव की चिर–जिज्ञासु आत्मा उस चुनौती को स्वीकार कर अज्ञात के अनन्त रहस्यों को खोजने के लिए अपने विजय पथ पर निकल पड़ती है, वैसे ही क्या ज्ञान का यह सर्वोच्च शिखर, ज्ञान का यह महासागर, ज्ञान का यह सूर्य वेद भी मानव की बुद्धि और परिश्रम के लिए चुनौती नहीं है? किसी नास्तिक के लिए भी इस अज्ञात को सुज्ञात बना देने से बढ़कर जीवन की कृतकार्यता और क्या हो सकती है? ज्ञान का भण्डार वेद ज्ञान के नए आयाम अपने पक्ष में छिपाए साहसी व्यक्तियों की प्रतीक्षा में है।

महात्मा बुद्ध का समय प्रायः सभी इतिहासकारों की दृष्टि में ईसा से लगभग 400 वर्ष पूर्व माना जाता है। इस प्रकार उनका समय हुआ – 1966 (2019)+400=2366 वर्ष पूर्व (अब के अनुसार 2419)। स्थूल रूप से हम कह सकते हैं कि महात्मा बुद्ध का समय अबसे लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व है अर्थात् ढाई हजार वर्ष से पहले महात्मा बुद्ध या बौद्ध मत की कल्पना नहीं की जा सकती।

रहा जैन मत। यदि जैन मत का प्रवर्तक महावीर स्वामी को माना जाये तो वर्धमान महावीर और गौतम बुद्ध दोनों समकालीन थे, उनकी परस्पर भेंट भी हुई, दोनों ही राजकुमार थे और दोनों ने अपने समय की राजनीत को भी काफी प्रभावित किया था। यदि राजनीतिक दृष्टि से तत्कालीन इतिहास का अध्ययन किया जाये जिसकी कि परम्परा अपने देश में बहुत कम है, तो कदाचित् वैशाली को अपना कार्यक्षेत्र बनाने वाले इन दोनों महात्माओं की सामन्तोचित कूटनीतियों के परस्पर घात–प्रतिघात का भी आंकलन किया जा सके। पर वह विषयान्तर है। कहने का भाव केवल यह है कि वर्धमान महावीर और शाक्य पुत्र गौतम के समकालीन होने के कारण जैन धर्म को भी बौद्ध धर्म का समकालीन अर्थात् ढाई हजार वर्ष पुराना ही माना जा सकता है।

परन्तु आजकल के जैनियों की प्रवृत्ति अपने मत को इससे बहुत प्राचीन सिद्ध करने की है। वे वेद के अन्दर भी अपने तीर्थंकरों का वर्णन खोजते हैं। परन्तु जैसे ''ईशवास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्'' – इस मन्त्र खण्ड के आधार पर वेद में हजरत ईसामसीह का उल्लेख सिद्ध करना उपहासास्पद है या ''पश्येम शरदः..... शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्'' – इस मन्त्रखण्ड में मक्का मदीना का उल्लेख सिद्ध करना उपहासास्पद है, वैसा ही उपहासास्पद है ''त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति'' और ''घनाघनः क्षोभणश्चषणीनाम्'' – आदि मन्त्र खण्डों में से भगवान् ऋषभदेव का वर्णन निकालना, परन्तु यहाँ हम इस विवाद में नहीं पड़ते। यदि जैनी लोग अपने मत को ढाई हजार वर्ष पुराना नहीं उससे अधिक पुराना मानते हैं तो मानें। उससे हमारे युक्तिक्रम में कोई अन्तर नहीं आता। अपने मत प्रवर्तक और मत के प्रादुर्भाव की जो भी तिथि वे निर्धारित करना चाहें करें। इतना निश्चित है कि इतिहास में उन्हें ऐसा काल निर्धारण अवश्य करना पड़ेगा जब उनके मत–प्रवर्तक या मत का अस्तित्व संसार में नहीं था और उसके बाद वे अस्तित्व में आये।

युक्ति का आधार – हमारे युक्तिक्रम का आधार यह है कि संसार के ये जितने मत–मतान्तर हैं और जितने उनके धर्मग्रन्थ हैं, वे भले ही अपने आपमें ईश्वरीय ज्ञान होने का दावा करें, परन्तु वे ईश्वरीय नहीं, मानवकृत हैं। इन मतों के विशिष्ट पैगम्बर हैं, उन पैगम्बरों की विशिष्ट जन्मतिथियाँ हैं, उन धर्मग्रन्थों के तैयार होने का विशिष्ट समय है। इतिहास इसका साक्षी है। इतिहास के इन तथ्यों को झुठलाया नहीं जा सकता और इन धर्मग्रन्थों में कुछ बातों में समानता है, यह भी निर्विवाद है। उदाहरणार्थ मनुस्मृति के अनुसार धृति, क्षमा, अस्तेय, इन्द्रियनिग्रह, अक्रोध आदि जिन तत्त्वों को धर्म का लक्षण बताया गया है, क्या ईसा का गिरि प्रवचन (सर्मन ऑन द माउण्ट), मूसा के दस आदेश (टैन कमाण्डमेंट्स) और महात्मा बुद्ध द्वारा वर्णित अष्टांगिक मार्ग या आर्य सत्य तथा कुरान द्वारा वर्णित सच्चे मुसलमानों के रोजा, जकात आदि कर्त्तव्यों में कोई विशेष अन्तर है? योगदर्शन में –

''तत्राहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः'' और

''शौचसन्तोषतपः स्वाध्याययेश्वरप्रणिधानानि नियमाः''

कहकर जिन यमों और नियमों का उल्लेख किया गया है, वे प्रकारान्तर से सार्वत्रिक नियम हैं और संसार के सभी धर्मों में इन गुणों को समान रूप से आदर की दृष्टि से देखा गया है। अन्तर है तो सामाजिक विधि–विधानों में, सृष्टि रचना की प्रक्रिया के वर्णन में या मतवादी साम्प्रदायिक मान्यताओं में। इसी कारण महात्मा गांधी कहा करते थे कि किसी धर्मात्मा हिन्दू में, या धर्मात्मा मुसलमान में या धर्मात्मा ईसाई में जीवन की पवित्रता की दृष्टि से कोई अन्तर नहीं होता। कोई धर्म ऐसा नहीं हो सकता जो सत्य, अहिंसा, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान को धर्म का अंग न माने, उन्हें अधर्म बताए।

हमारी स्थापना यह है कि धर्मग्रन्थों में पाई जाने वाली समानताओं का आधार (प्रत्युत कहना चाहिए कि असमानताओं का आधार भी, क्योंकि असमानताएं भी बहुत बार किन्हीं समानताओं का विकृत रूप ही होती हैं) वेद हैं, क्योंकि समस्त उपलब्ध धर्मग्रन्थों में वेद सबसे प्राचीन है। मैक्समूलर ने जब यह कहा था – ''वेद हमारे लिए मनुष्य बुद्धि के सबसे पुराने परिच्छेद के परिचायक हैं'' – तब से आज तक इस उक्ति का खण्डन नहीं किया जा सकता, प्रत्युत दिन–प्रतिदिन इसी बात की पुष्टि होती गई कि संसार के पुस्तकालय में सबसे प्राचीन पुस्तक 'वेद' है।

विशुद्ध तर्क की खातिर यह भी कहा जा सकता है कि यदि किसी दिन पुरातत्त्वान्वेषियों को कहीं किसी अज्ञात स्थान की खुदाई में से कोई ऐसा ग्रन्थ मिल जाये जो वेदों से अधिक प्राचीन सिद्ध हो सके और इस ग्रन्थ का वर्ण्य विषय वेदों से ही मेल खाता हो तो तर्क प्रवण वेदाभिमानियों को यह मानने में संकोच नहीं करना चाहिए कि वेद का आधार वह नव–उपलब्ध ग्रन्थ होगा, परन्तु जब तक संसार के विद्वान् इस बात पर सहमत हैं कि वेद सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं तब तक यह निष्कर्ष निकालना सर्वथा तर्क संगत है कि इन सब समानताओं का आधार वेद है, क्योंकि वही सबसे प्राचीन है।

वेदों का निर्माण काल – पूछा जा सकता है कि वेदों का निर्माण काल क्या है? हम स्वीकार करते हैं कि इस विषय में विद्वानों में मतभेद हैं, परन्तु एक बात असंदिग्ध रूप से कही जा सकती है और वह यह कि ज्यों–ज्यों अनुसंधान की गहराई बढ़ती जाती है त्यों–त्यों वेद का समय लगातार पीछे ही पीछे खिसकता जाता है। विषय के संक्षिप्त निदर्शन के लिए हम यहाँ एक तालिका दे रहे हैं, जिससे बात और स्पष्ट हो जायेगी।

वेदों का अनुमानिक काल

नाम	कम से कम	अधिक से अधिक
मैक्समूलर	800 वर्ष ई. पू.	1500 वर्ष ई. पूर्व
मैक्डॉनल्ड	1000 वर्ष ई. पू.	2000 वर्ष ई. पूर्व
हॉग	1400 वर्ष ई. पू.	2000 वर्ष ई. पूर्व
विटसन	1500 वर्ष ई. पू.	2000 वर्ष ई. पूर्व
ग्रिफिथ	1500 वर्ष ई. पू.	2000 वर्ष ई. पूर्व
ह्विटनी	1500 वर्ष ई. पू.	2000 वर्ष ई. पूर्व
जैकोबी	1500 वर्ष ई. पू.	4000 वर्ष ई. पूर्व
तिलक	1500 वर्ष ई. पू.	8000 वर्ष ई. पूर्व

इसका अभिप्राय यह है कि पाश्चात्य विद्वान् वेदों का काल अधिक से अधिक अब से 6000 वर्ष पूर्व तक ले जाते हैं, जबकि लोकमान्य तिलक इस समय को 10000 वर्ष पूर्व तक ले जाते हैं। अन्य भारतीय विद्वान् इस काल को दस हजार वर्ष से और बहुत पीछे तक ले जाते हैं।

शेष पृष्ठ 7 पर

आर्य आदर्शों के प्रतीक योगीराज श्रीकृष्ण

– डॉ. भवानीलाल भारतीय

मनुष्य अपनी विविध प्रवृत्तियों को उन्नति के सर्वोच्च सोपान पर पहुंचा कर किस प्रकार एक साधारण मानव से महामानव के उच्च पद पर प्रतिष्ठित हो सकता है, इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण कृष्ण का जीवन है। कारागार की विवशतापूर्ण परिस्थितियों में जन्म लेकर भी कोई मनुष्य संसार का महत्तम नेता किस प्रकार बन जाता है यह कृष्ण चरित्र में देखिए।

बंकिम के अनुसार श्री कृष्ण ने अपनी ज्ञानार्जनी, कार्यकारिणी और लोकरंजनी तीनों प्रकार की प्रवृत्तियों को विकास की चरम सीमा तक पहुंचा दिया था, तभी उनके लिए यह सम्भव हो सका कि वे अपने समय में महान् राजनीतिज्ञ और समाज व्यवस्थापक के गौरवान्वित पद पर आसीन हो सके।

बाल्यावस्था से लेकर जीवन के अन्तिम क्षण तक कृष्ण उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होते रहे। उनका एकमात्र उद्देश्य रहा, धर्म के अनुसार लोगों को अपने-अपने कर्तव्यों के पालन में रत रखना। वे स्वयं धर्म में अनन्य निष्ठा रखने वाले और उसके वास्तविक रहस्य को जानकर उसका उपदेश देने वाले महान् धर्मोपदेष्टा थे। ऋषि दयानन्द ने तो यहां तक कह दिया है कि श्रीकृष्ण ने जन्म से मरण पर्यन्त कुछ भी बुरा काम नहीं किया। यह सब कुछ धर्म के कारण ही सम्भव हुआ, और तभी तो महाभारतकार ने लिखा- ''यतो कृष्णस्ततो धर्मो यतो धर्मस्ततो जयः।''

जहां कृष्ण हैं, वहां धर्म है और जहां धर्म है वहां जय है संजय ने भी इसी प्रकार गीता के अन्त में कहा -

''यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीविजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।। (गीता 1878)

''जहां योगेश्वर कृष्ण और गाण्डीवधारी अर्जुन हैं, वहीं श्री है, वहीं विजय है। अधिक क्या कहें वही विभूति और अचल नीति है।'' ये उक्तियां कृष्ण को ईश्वरावतार मानकर नहीं कही गई है। यदि ऐसा होता, तो इनका कुछ भी मूल्य नहीं होता। ये कृष्ण की सर्वोपरि मानवीय भावनाओं को ही प्रकाशित करती हैं, जिनकी चरम साधना के कारण कृष्ण साधारण मानव की कोटि से उठकर महापुरुषों की श्रेणी में आये, योगेश्वर और योगिराज बने।

बाल्यकाल से ही देखिए। एक दृढ़ विचार वाले पुष्ट शरीर वाले और स्वस्थ मन तथा बलवान् आत्मा वाले ब्रह्मचारी में जो-जो विशेषताएं होनी चाहिए वे हमें कृष्ण में मिलती हैं। उनका शारीरिक बल एक अनुकरणीय वस्तु है, जिससे उन्होंने बाल्यकाल में ही अनेक त्रासदायक और हिंसक जन्तुओं का वध किया। समय आने पर उन्होंने युद्ध कौशल और रणनीति का सांगोपांग अध्ययन किया। युद्धनीति के वे कितने प्रकाण्ड पण्डित थे, यह तो इसी से ज्ञात हो जायेगा कि अर्जुन और सात्यकि जैसे वीर उनके शिष्य थे, जिनको उन्होंने युद्ध विद्या सिखाई थी। गदा-युद्ध के वे अच्छे ज्ञाता थे। निर्भयता, निडरता और चातुर्य के तो वे भण्डार ही थे।

शारीरिक बल के अतिरिक्त उनका शास्त्रीय ज्ञान भी बढ़ा चढ़ा था। वे वेदों और वेदांगों के ज्ञाता थे, यह हमें भीष्म की उक्ति से ज्ञात होता ही है। साथ ही साथ वे चिकित्सा, विद्याओं के भी पण्डित थे। मृतप्राय उत्तरा के बालक को जीवन प्रदान करना, मुरलीवादन कर सबके मन को मोहित करना तथा अर्जुन के सारथी बनकर भयंकर युद्धक्षेत्र में अपने रथी की रक्षा करना आदि उदाहरण इन बातों को सिद्ध करने के लिए उपस्थित किये जा सकते हैं। शारीरिक बल और मानसिक शक्तियों का उन्होंने चरम विकास किया था। परन्तु आचार की दृष्टि से भी उनकी बराबरी उस समय का कोई पुरुष नहीं कर सकता था। वे महान् सदाचारी और शीलवान् पुरुष थे। माता-पिता की आज्ञा पालन और उनके प्रति सदा पूज्य भाव रखने के गुण को उन्होंने कभी विस्मृत नहीं किया। वे मादक द्रव्यों तथा द्यूत बुराइयों से सदा दूर रहते थे। यहां तक कि उन्होंने समय-समय पर यादवों में ये आज्ञाएं प्रचारित करा दी थीं कि कोई जन यदि मदिरा पियेगा तो राज्य की ओर से दण्डनीय होगा। ब्रह्मचर्य के विषय में कहा जा सकता है कि एक पत्नीव्रत का पालन करते हुए भी उन्होंने सपत्नीक बारह वर्ष के ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया। तदनन्तर उनके प्रद्युम्न जैसा पुत्र उत्पन्न हुआ, जो रूप, गुणशील और आचार में सर्वथा अपने पिता के ही तुल्य था। पुराणकारों ने उनके चरित्र के इस पहलू को सम्पूर्णतया विस्मृत कर दिया है।

श्री कृष्ण सन्ध्या और अग्निहोत्र आदि दैनिक कर्तव्यों के पालन में कभी प्रसाद नहीं करते थे। महाभारत में स्थान-स्थान पर इसके उल्लेख मिलते है। दुर्योधन से सन्धिवार्ता के लिए जाते हुए कृष्ण जब-जब प्रातःकाल या सायंकाल होता है, तब-तब वे सन्ध्या और अग्निहोत्र करना नहीं भूलते। महाभारत में लिखा है -

प्रातरुत्थाय कृष्णस्तु कृतवान् सर्वआहिकम्।
ब्राह्मणैर भ्यनुज्ञातः प्रययौ नगरं प्रति।।
(म. भा. उद्योगपर्व 5, 87, 1)

प्रातःकाल उठकर कृष्ण ने आहिक (सन्ध्या-हवन) आदि क्रियाएं की, पुनः ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर नगर की ओर गए। इस प्रकार का एक अन्य श्लोक है -

कृत्वा पौर्वाहिकं कृत्यं स्नातः शुचिरलङ्कृत।। उपतस्थे विवत्वन्तं पावकं च जनार्दनः।।
(म. भा. उद्योगपर्व 5, 81, 9)

''स्नान करके प्रातःकाल की आहिक क्रियाएं की ..... आदि।'' अब इसे विडम्बना के अतिरिक्त और क्या कहें कि नित्य सन्ध्या योग के द्वारा सच्चिदानन्द ब्रह्मा का ध्यान करने वाले और अग्निहोत्र के

द्वारा देवताओं का यजन करने वाले, आर्य मर्यादा पालक, आदर्श महापुरुष कृष्ण को लोगों ने साक्षात् ईश्वर ही बना दिया।

कृष्णचरित्र की सर्वोपरि विशेषता उनकी राजनैतिक विचक्षणता और नीतिज्ञता है। उनका राजनीति के प्रति यह अनुराग किसी स्वार्थ की भावना से प्रेरित नहीं था, जैसा कि आजकल एक अनेक राजनैतिक नामधारी पुरुषों में दिखाई पड़ता है। और न ही उनकी राजनैतिक विचारधारा किसी संकुचित राष्ट्रीयता के सीमाक्षेत्र में बंधी हुई थी। उस समय वर्तमान युग में व्यापक सीमित राष्ट्रीय भावना का तो जन्म ही नहीं हुआ था। कृष्ण के इस क्षेत्र में प्रवेश करने का एकमात्र उद्देश्य था लोक कल्याण, विश्व कल्याण और अराजकता को मिटाकर आर्यविधि का संस्थापन। लोकोपकार की यही भावना लेकर वे इस क्षेत्र में प्रविष्ट हुए।

सर्वप्रथम उनकी दृष्टि अपने ही मथुरा जनपद के स्वेच्छाचारी, एकतंत्रशासन के प्रतिनिधि राजा कंस के ऊपर गई। उन्होंने पारिवारिक और व्यक्तिगत सम्बन्धों का विचार न करते हुए यादवों के हित को सर्वोपरि समझा और कंस के विनाश में ही सबका कल्याण देखा। कंस की मृत्यु के पश्चात् ही मथुरा के यादवों को अपनी सर्वांगीण उन्नति करने का अवसर मिला। कृष्ण का अभी एक कार्य पूर्णतया समाप्त भी न हुआ था कि जरासंध के आक्रमण होने प्रारम्भ हो गये। कंस के मारे जाने से जरासंध ने अनुमान लगा लिया था कि अब अधिक दिनों तक आर्यावर्त में अत्याचार, स्वेच्छाचार और अराजकता का राज्य नहीं चल सकता; क्योंकि कृष्ण के रूप में सदाचार, स्वतन्त्रता, मर्यादा और धर्म, नीति तथा समाज का संरक्षक एक महान् लोकनायक उत्पन्न हो चुका था। कंस भी तो आखिर जरासन्ध का ही जमाता और उसी का अनुगामी था। कंसवध की घटना में जरासन्ध ने अपनी नीत और हथकण्डों को पराजित होते देखा। वह तुरन्त मथुरा पर चढ़ दौड़ा और एक बार ही नहीं, सत्रह बार उसने आक्रमण किए। कृष्ण के अपूर्व रणचातुर्य और उनके सफल सेनापतित्व में यादवों ने जरासन्ध की सेना के दांत खट्टे कर दिये। परन्तु जब कृष्ण ने ही यह समझ लिया कि शूरसेन प्रदेश सुरक्षा की दृष्टि से अधिक उत्तम नहीं है, तो उन्होंने यादव जाति के निवास के लिए द्वारिका जैसा भौगोलिक दृष्टि से सुदृढ़ आवासस्थान ढूंढ़ निकाला।

जरासन्ध के सेनापति शिशुपाल को प्रथम तो रुक्मिणी के विवाह के अवसर पर कृष्ण के द्वारा नीचा देखना पड़ा और द्वितीय बार जब राजसूय यज्ञ के प्रसंग में उसने अर्घ्य के पचड़े को लेकर यज्ञध्वंस करने और कृष्ण के किये कराये पर पानी फेरने का विचार किया तो उसे यमलोक पहुंचाकर कृष्ण ने अपने 'विनाशाय च दुष्कृताम्' रुपी महायज्ञ में एक और आहुति प्रदान की। जरासन्ध को समाप्त करने का अवसर इससे पूर्व ही उपस्थित हो गया था। 86 राजाओं को कैद कर और उनकी महादेव के सम्मुख बलि देने का जो पैशाचिक षडयन्त्र जरासन्ध ने कर रखा था, उसे कृष्ण जैसे धर्मात्मा कैसे सहन कर सकते थे? इस दुष्कृत्य में तो उसके समस्त अत्याचारों की चरम परिणति हो गई थी, अतः उसे सहन करना सर्वथा असम्भव था। ऐसा मनुष्य जाति का शत्रु जरासन्ध कृष्ण की नीति और चतुराई से भीम द्वारा मारा गया। न तो युद्ध करना पड़ा और न रक्तपात। सब काम शान्तिपूर्वक हो गया।

महाभारतीय युद्ध में भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य दुर्योधन आदि कौरव पक्ष के सभी महारथी वीरों का अन्त एक-एक करके हुआ और इस प्रकार कृष्ण के इस धर्म संस्थापन रूपी महायज्ञ में पूर्णाहुति लगी। युधिष्ठिर के धर्मराज्य संस्थापन के कार्य में श्रीकृष्ण का योगदान तो सर्वविदित ही है। कृष्ण की इस अपूर्व नीतिज्ञता और रणचातुरी से यह अनुमान लगाना कि वे युद्धलिप्सु थे अथवा समस्त देश को युद्ध की भयंकर और विनाशकारी ज्वालाओं में झोंककर तमाशा देखने वाले थे, अनुचित होगा। कृष्ण ने यथाशक्य युद्ध का विरोध किया, यह हम प्रत्येक प्रसंग में देखते हैं। उन्होंने न तो युद्ध को समस्या सुलझाने का एकमात्र उपाय ही समझा और न उसमें कूद पड़ने के लिए किसी को उत्साहित ही किया। यहां तक कि वैयक्तिक मानापमान की परवाह न करते हुए भी वे सन्धि का सन्देश लेकर हस्तिनापुर गये और चाहे उसमें उन्हें सफलता न भी मिली, परन्तु संसार को ज्ञात हो गया कि महात्मा कृष्ण सन्धि के लिए प्रयत्नशील थे और सन्धि के ही आकांक्षी थे। उन्होंने स्वयं कहा है कि वे इस पृथ्वी को युद्ध की विभीषिका से बचा हुआ ही देखना चाहते हैं।

यह ठीक है कि दुर्योधन की कुटिलता से उनकी बात नहीं मानी गई और युद्ध अपरिहार्य हो गया। परन्तु लोग यह भी जान गये कि पाण्डवों का पक्ष सत्य का है और दुर्योधन हठवंश मानव जाति के सर्वनाश में प्रवत्त हो रहा है। यह महत् कार्य कृष्ण की अपूर्व दूरदर्शिता और विलक्षण मेधावी बुद्धि से ही सम्पन्न हुआ। युद्ध प्रारम्भ होते ही उनका दृष्टिकोण बदल गया। अब वे युद्ध को क्षत्रियों के लिए खुला हुआ स्वर्ग का द्वार बतलाते हैं और उनका विश्वास है कि आततायियों का विनाश किये बिना कार्य नहीं चल सकता। रणक्षेत्र में उपस्थित होते ही अर्जुन में जो क्लीबता और हृदय दौर्बल्य उत्पन्न हो गया था। उसे महाराज श्रीकृष्ण ने अनाथों के उपयुक्त तथा स्वर्ग और कीर्ति का नाश करने वाला बतलाया। वास्तव में क्षात्र धर्म का यही प्राकृत रूप था, जिसे श्रीकृष्ण ने अत्यन्त ओजस्वी और प्रभविष्णु ढंग से निरूपित किया और जो आज विश्व के सम्मुख ''गीता'' के नाम से विद्यमान है।

यह है श्रीकृष्ण की राजनीतिज्ञता का किन्चित् दिग्दर्शन। उन्होंने जहां अनेक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्वपूर्ण प्रश्नों को सुलझाने में अपने जीवन का अधिकांश भाग

अगले पृष्ठ पर जारी

पृष्ठ 1 का शेष

आर्य प्रतिनिधि सभा, अमेरिका के तत्वावधान में 29वाँ आर्य महासम्मेलन शिकागो में भव्यता के साथ सम्पन्न

वातावरण को संगीतमय बनाकर भक्तिरस में रंग दिया। आर्य महासम्मेलन में विभिन्न सत्रों में जिन विद्वान् वक्ताओं ने अपने विचार प्रस्तुत किये उनमें आचार्य दर्शनानन्द, डॉ. मोक्षराज आर्य, डॉ. सोमवीर आर्य, डॉ. भूषण वर्मा, आचार्य ब्रह्मदेव, डॉ. सिद्धार्थ, आचार्य हरि प्रसाद, डॉ. अमरजीत शास्त्री, डॉ. दयाशंकर विद्यालंकार, आचार्य वेदश्रमी जी, डॉ. प्रेरणा आर्या, श्रीमती अनू मल्होत्रा, श्रीमती कविता भाटिया, स्वामी सम्पूर्णानन्द जी, श्रीमती आशा ओरस्कर, श्री विमल बेलानी जी, बहन पूनम आर्या तथा बहन प्रवेश आर्या, डॉ. भूषण वर्मा, डॉ. रमेश गुप्ता तथा डॉ. अमिता गुप्ता, डॉ. राजेन्द्र गांधी तथा श्रीमती ज्योति गांधी, श्री रणवीर कुमार न्यूयार्क, श्री देव महाजन मेस्टन, डॉ. भूपेन्द्र गुप्ता, आचार्य धर्मपाल शास्त्री, डॉ. सुधीर आनन्द, डॉ. कुलभूषण गुलाटी, डॉ. दीन बी. चन्डोरा, श्रीमती सरला दहिया, डॉ. सुचि खोसला, डॉ. एस.सी. शर्मा आदि के नाम उल्लेखनीय है।

इस आर्य महासम्मेलन के सम्पूर्ण संयोजन का दायित्व आर्य प्रतिनिधि सभा अमेरिका के मंत्री श्री भुवनेश खोसला ने बड़ी कुशलता के साथ निभाया। उनके अतिरिक्त सभा के प्रधान श्री विश्रुत आर्य, आर्य समाज शिकागो की मंत्राणी श्रीमती मोहिनी भाटिया एवं आर्य समाज शिकागो की सम्पूर्ण कार्यकारिणी ने महासम्मेलन की व्यवस्था में अथक परिश्रम करके अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। कार्यक्रम में शिकागो स्थित भारतीय दूतावास से कौंसलेट जनरल भी मुख्य अतिथि के रूप में सम्मिलित हुए। महासम्मेलन में सबसे आकर्षक कार्यक्रम युवाओं द्वारा अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल के जीवन पर प्रस्तुत किया गया नाटक रहा। व्यवस्था में डॉ. सुखदेव चन्द सोनी जी के संरक्षण में बनाई गई स्वागत समिति का भी विशेष योगदान रहा। मुख्यरूप से डॉ. राजेन्द्र दहिया, श्री सुरेश पाल सिंह अहलावत, श्री रमेश मलहान, श्रीमती सरोज सोनी, श्रीमती स्वाती आर्या, श्रीमती सरला दहिया, श्रीमती मधु उप्पल, श्री अंकुर बंसल, आचार्य हरि प्रसाद आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

28 जुलाई, 2019 को समापन कार्यक्रम आर्य समाज शिकागो के प्रांगण में आयोजित किया गया। इस कार्यक्रम की विशेषता यह रही कि आर्य समाज अमेरिका के प्राण डॉ. सुखदेव चन्द सोनी जी का 85वाँ जन्मदिवस अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर स्वामी आर्यवेश जी ने अन्य सभी भारतीय प्रतिनिधियों के साथ मिलकर डॉ. सोनी जी को जन्मदिवस की शुभकामनाएँ प्रेषित करते हुए शताधिक वर्षों तक आर्य समाज की सेवा करने का आशीर्वाद देते हुए अभिनन्दन पत्र भेंट किया। इस अवसर पर अनेकों अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने भी डॉ. सोनी जी को जन्मदिवस की शुभकामनाएँ प्रदान की। समापन कार्यक्रम का कुशल संचालन आर्य समाज शिकागो की मंत्राणि श्रीमती मोहिनी भाटिया ने किया।

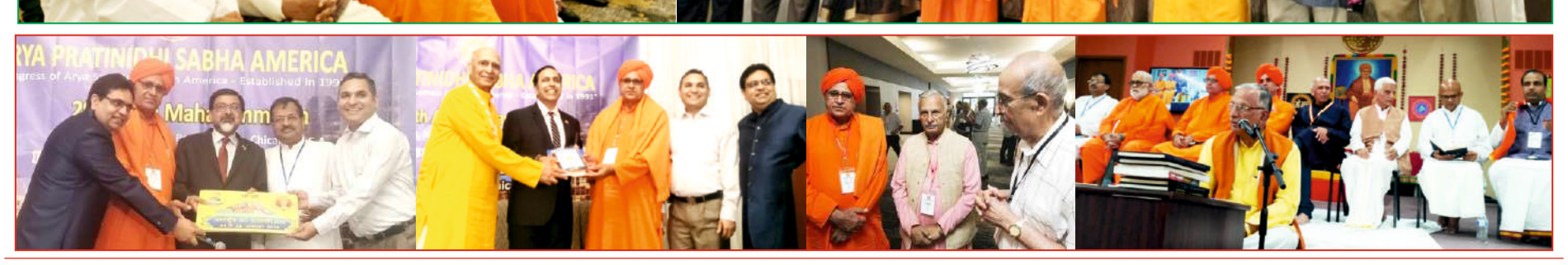

पिछले पृष्ठ का शेष

आर्य आदर्शों के प्रतीक योगीराज श्रीकृष्ण

लगाया, वहां उन्होंने सामाजिक प्रश्नों की भी अवहेलना नहीं की। श्री कृष्ण वर्णाश्रम धर्म के सबसे प्रबल समर्थक और शास्त्रीय मर्यादा के रक्षक थे। परन्तु इससे यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि वे किसी प्रकार की सामाजिक कट्टरता या अनुदारता के पोषक और गतानुगतिकता के समर्थक थे। उनकी सामाजिक धारणाएं उदारपूर्ण और नीतियुक्त होती थीं। उन्होंने सदा दलित और पीड़ित वर्ग का पक्ष ग्रहण किया। विदुर जैसे धर्मात्मा लोगों का उन्होंने सदा सम्मान किया। नारी वर्ग के प्रति उनकी बड़ी श्रद्धा थी। कुन्ती, गान्धारी, देवकी आदि पूजनीय, गरीयसी महिलाओं तथा सुभद्रा, द्रौपदी आदि कनिष्ठा देवियों के प्रति उनके हृदय में सदा श्रद्धा, सम्मान और आदर के भाव रहे। जानते थे कि मातृशक्ति का यथोचित सम्मान करने से ही देश की भावी सन्तान में श्रेष्ठ गुणों को लाया जा सकता है।

कृष्ण के व्यक्तित्व के इन विविध रूपों की समीक्षा कर लेने के पश्चात् भी उनके चरित्र की उस महनीयता और उदारता की ओर ध्यान आकृष्ट कराना आवश्यक है, जिसके कारण आध्यात्मिक क्षेत्र के महान् उपदेष्टा और योगेश्वर के रूप में उनका सर्वत्र सम्मान हुआ, हो रहा है और जब तक संसार में आर्य संस्कृति का कोई भी अनुयायी रहेगा, तब तक होता रहेगा। कृष्ण राजनीतिज्ञ भी थे, धर्मोपदेष्टा भी थे, परन्तु वास्तव में वे योगी थे और थे अध्यात्म पथ के अपूर्व साधक। उन्होंने कर्मयोग का ही उपदेश दिया और अपने जीवन में आचरण के द्वारा उसे ही प्रत्यक्ष कर दिखलाया।

वे ज्ञान और कर्म के समन्वय के पक्षपाती थे। यही आर्य संस्कृति और परम्परा की विशेषता है, जो कृष्ण के व्यक्तित्व में साकार हो उठी थी। सच्चिदानन्द के परम तत्व का साक्षात्कार कर लेने के बाद भी वे लोकमार्ग से च्युत नहीं हुए। क्योंकि वे गीता में कह चुके हैं कि पूर्णकाम हो जाने के पश्चात् भी योगी को कर्तव्य कर्म करने से विराम नहीं लेना चाहिए। इस प्रकार उन्होंने कर्मठ जीवन का पाठ पढ़ाया परन्तु साथ ही यह भी कहा कि हम अपने स्वरूप को समझे और योगी की भांति निष्काम भाव से कर्तव्य पालन में दत्तचित्त हों। यही श्रीकृष्ण के उपदेशों का सार है और यही उनके जीवन की महती सफलता का एकमात्र कारण है।

जीवन की इस विविधता और सर्वांगीणता के कारण कृष्ण चरित्र का स्थान, संसार में अद्वितीय है। स्वदेश ही क्या, विदेशों, में भी ऐसे सर्वगुण सम्पन्न महापुरुष का जन्म नहीं हुआ। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम के साथ अवश्य उनकी तुलना की जा सकती है परन्तु राम और कृष्ण के जीवन और उनकी परिस्थितियों में अन्तर था। राम स्वयं आदर्श राजा थे, परन्तु राजाओं के निर्माण एवं स्वयं सत्ता से दूर रहने वाले महापुरुष थे। राम के समक्ष वे कठिनाइयाँ नहीं थी, जो कृष्ण के समक्ष थीं। अतः किसी भी दृष्टि से क्यों न देखा जाये, कृष्ण के तुल्य मानव भूमण्डल में अद्यतन नहीं हुआ, यह निश्चित ही है।

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत

– कामता प्रसाद मिश्र

किसी भी समाज और राष्ट्र की चिन्तनशैली से, वैचारिक स्तर से यहाँ की सभ्यता, रहन–सहन, आचार–व्यवहार और जीवन क्रम की भविष्यत संभावनाओं की बारीकियों की जानकारी होती है। वैदिक युग कभी सतयुग नाम से पुकारा जाता था। उस युग के सभी प्राणी दैहिक, दैविक तथा भौतिक तापों से मुक्त और आनन्द का जीवन जीते थे। इसका कारण साफ है कि उस युग में वेद का पठन–पाठन होता था तथा वैदिक मान्यताओं तथा मूल्यों का पूर्ण रूपेण आदर और सम्मान किया जाता था। अवैदिक कार्य को पाप समझा जाता था। उस युग की चिन्तन पद्धति और वैचारिक स्तर उत्कृष्ट था। उस युग में शिष्य लोग श्रेष्ठ गुरु से श्रेष्ठ शिक्षा गुरुकुलों में रहकर साथ–साथ प्राप्त करते थे। वहाँ ऊँच–नीच, राजा–रंक का कोई भेद नहीं होता था।

कठोपनिषद् की यह सूक्ति देशवासियों के लिए आज के परिवेश में अति महत्त्वपूर्ण और आचरणीय है, क्योंकि आज देश में भ्रष्टाचार, आतंकवाद, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, स्वार्थवाद, शोषण और राजनीतिक भ्रष्ट चिन्तन का बोलबाला बढ़ता जा रहा है। दूसरी तरफ धर्म के नाम पर धनोपार्जन, धोखाधड़ी, पाखण्ड और आडम्बर, अन्धविश्वास, कदाचार, ईश्वरावतार बनने की होड़, देवी–देवता की बाढ़ बेरोक–टोक बढ़ते जा रहे हैं। समाज में विकृत मानसिकता, आचरणहीनता, आये दिन नाबालिक मासूम बालिकाओं के साथ दुराचार तथा अमानुषिक यौनाचार आदि का बढ़ना अशुभ एवं पतन के संकेत हैं। ऐसी विषम परिस्थितियों को समाप्त करने के लिए सरकार को कठोर कानून बनाने तथा उसका पालन करवाने और कठोर दण्ड देने के लिए आगे आना होगा। वहीं शिक्षकों, मनीषियों, बुद्धिजीवियों, समाज सुधारकों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं, सदाचारी संन्यासियों को समाज सुधार एवं बुराईयों के निवारणार्थ कमर कसने की महती आवश्यकता है। समाज और देश की कुरीतियों और राजनीतिक विकृति के निवारण के यही कारक हैं। जो सदैव समय–समय पर समाज का सुधार करने एवं नवजागरण के प्रेरणा स्रोत रहे हैं। इनमें स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजाराम मोहन राय, महात्मा गांधी आदि के नाम सदैव स्मरणीय रहेंगे।

उक्त शीर्षक एक श्रेष्ठ, आचरणीय, प्रेरणादायक संदेश और उपदेश है, जिसमें उपनिषदकार ने एक सूक्ति में गागर में सागर भर दिया है। मनुष्य इस सूक्ति की शिक्षा से अपने जीवन, समाज, देश तथा राष्ट्र को स्वस्थ, सबल तथा समृद्धिपूर्ण बना सकता है। इस सूक्ति का साधारण अर्थ यह है – उठो, जागो तथा श्रेष्ठ, सदाचारी, विद्वान् तथा आचरणवान गुरु से श्रेष्ठ ज्ञान–ब्रह्मज्ञान, आध्यात्मिक ज्ञान, भौतिक विज्ञान आदि श्रेष्ठ ज्ञान प्राप्त कर मानवीय मूल्यों का आचरण करके राष्ट्रभक्त, श्रेष्ठ मनुष्य, कर्त्तव्यनिष्ठ तथा देश और समाज को नई प्रगतिशील दिशा दें। ज्ञान का प्रकाश पुंज बनें। यही ज्ञान का प्रकाश समाज और देश को उन्नत बना सकेगा। शतपथ ब्राह्मण में कहा है – असतो मा सद् गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। अर्थात् हे परमेश्वर हमें असत्य से सत्य की ओर ले चलो। अज्ञानता के अन्धकार से प्रकाश रूपी सद्ज्ञान की ओर ले चलो। यह एक श्रेष्ठ और प्रेरणादायक शिक्षा है, जिससे प्रेरणा प्राप्त होती है कि मनुष्य सत्य और असत्य, शुभ तथा अशुभ, अच्छे और बुरे का ज्ञान, विवेक से समझें और आचरण करें।

श्रेष्ठ शिक्षा प्राप्त कर ही मनुष्य मानवीय मूल्यों को आचरण में उतारकर तथा उसकी रक्षा करते हुए पुरुषार्थ – अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को प्राप्त करने का यत्न करता है। पुरुषार्थ ही मानवता की रक्षा कर सकता है। वही भौतिकता तथा आध्यात्मिकता का समन्वय करके राष्ट्र को सुदृढ़ तथा सशक्त बना सकता है। वर्तमान समय चारों तरफ विषमताएँ ही दृष्टिगोचर हो रही हैं। सरकारें गरीबी, जनसंख्या वृद्धि, दरिद्रता, बेरोजगारी, महंगाई को मिटाने में असफल हो रही हैं। समाज से भय, शोषण, सुरक्षा आदि रोकने में भी असफल हैं। न्याय व्यवस्था पवित्रता खोकर संदेह के घेरे में है। प्रशासन मनमाना करके समाज के शोषण, उत्पीड़न में संलग्न है। सरकारें जातिवादी तथा सम्प्रदायों की संतुष्टि में तुष्टीकरण नीति अपनाकर, पक्षपात करके कुर्सी को बचाने तथा सामान्य जनता की उपेक्षा कर कुर्सी को मजबूत करने में व्यस्त हैं। ऐसी विषम परिस्थितियों में जन–जागरण अति आवश्यक है, क्योंकि लोक बेंच में जनता ही सर्वोच्च अदालत है, जिससे सरकारें बनती बिगड़ती हैं।

उपनिषद्कार कहते हैं – उठो! भारतीय संस्कृति की मर्यादा की रक्षा के लिए, स्वाभिमान रक्षार्थ, अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करो, भ्रष्टाचार समाप्त करके आतंकवाद जड़ से नष्ट करो, लोकतंत्र को मजबूत करो, मानवीय मूल्यों की रक्षा करो, दोहरे कानून, दोहरी शिक्षा व्यवस्था, भ्रूण हत्या, धर्मान्तरण आदि अनेक समस्यायें मुह बाये खड़ी हैं। उनकी भारतीय संस्कृति के मूल्यों की रक्षा करते हुए समाधान सुनिश्चित करो। सावधानी से विघटनकारी तत्त्वों को निर्मूल करो।

उपनिषद्कार आगे कहते हैं – जाग्रत– जागो! यहाँ जागने का तात्पर्य है कि लोगों के आलस्य करते हुए जीवन व्यतीत हो गये, आलस्य त्याग कर जागो राष्ट्र कातर दृष्टि से प्रतीक्षा में है, अकर्मण्यता त्याग कर कर्त्तव्यनिष्ठ बनो। आज देश में बाहुबली की, स्वार्थी धनबली तथा देश को लूटने वालों की संख्या में वृद्धि हो रही है। शिक्षा व्यवस्था चरमरा गई है। अयोग्य आरक्षण के नाम पर सरकारी नौकरियों को हथियाने में सफल हो रहे हैं। घुसपैठिये भारी मात्रा में आकर देश को दीमक की तरह से खोखला करने मे संलग्न हैं। घोटालेबाज देश का धन लूट कर विदेश भाग रहे हैं। वैदिक धर्म, संस्कृति तथा सभ्यता को आघात पहुँचाने वाले तत्त्व उच्च शैक्षिक संस्थाओं में पहुँचकर शिक्षार्थियों की मानसिकता बदलने में लगे हैं, जिससे राष्ट्रद्रोह तक के स्वर सुनाई पड़ने लगे हैं। ऐसी अनेक समस्यायें देश के सामने देश को निगलने को तैयार खड़ी हैं। कहाँ तक उनका वर्णन किया जाये। अतः देशवासियों जागो, जागो, जागो। देशवासियों भारत कभी विश्व गुरु था, आपके पास तो बुद्धि, विवेक, बल, शौर्य, धन तथा हर समस्या के समाधान की ऊर्जा है। इनका उपयोग कर देश का कल्याण करो।

हमारा देश भारतवर्ष (आर्यावर्त) जो कभी सोने की चिड़िया कहा जाता था। देश को अनेक आक्रमणकारियों ने लूटा, मुगलों तथा अंग्रेजों ने देश को निर्धन, गरीब और असहाय बनाया। देश स्वतंत्र हुआ परन्तु दुःख है कि अंग्रेजी संस्कृति के पोषक देश के नेता अंग्रेजी पद्धति तथा अंग्रेजों द्वारा निर्मित कानून के आधार पर शासन आज तक चला रहे हैं। भारतीय संस्कृति के मूल्यों तथा तत्त्वों को दर किनार कर उसी दमनकारी अंग्रेजी कानून पर शासन चलाने की नीति का पालन करके जन कल्याणकारी होने का डंका पीटा जा रहा है, जिसमें दोषी शासकों को अपराध करने पर दण्ड से मुक्त किया जाता था और निर्दोष को अपराधी बनाकर दण्डित किया जाता था। यह सत्ता को मजबूत और जनता को असहाय बनाने का अंग्रेजी शासकों का कुचक्र युक्त कानून था। आज के देशी शासक उसका भरपूर लाभ उठाकर दोषी होने पर भी निर्दोष सिद्ध करने में लगे हैं, ऐसे लोगों को कौन नहीं जानता। राजनीति के क्षेत्र में जहाँ मानवतावादी, राष्ट्र भक्त तथा समाजसेवी, ईमानदार हुआ करते थे, वहाँ अब राजनीति का अपराधीकरण होता जा रहा है। पहले तो नेता अपराधी का सहारा लेकर विधायक तथा सांसद चुने जाते थे। उसका परिणाम हुआ कि अपराधी स्वयं चुनाव लड़कर संसद तथा विधानसभा पहुँच रहे हैं। जेल में रहकर भी उन्हें चुनाव जीतने में कोई प्रतिबन्ध नहीं है। भारतवर्ष की सभी पार्टियों में अपराधी उस पार्टी की शोभा बढ़ा रहे हैं। सर्वोच्च न्यायालय के बार–बार निर्देश पर भी कोई पार्टी अपराधी मुक्त नहीं बनाना चाहती। इससे पार्टियों की नियत का पता चलता है।

यहाँ यह भी विचारणीय है कि आई.ए.एस. तथा पी.सी.एस. अथवा किसी भी सरकारी पद पर नियुक्ति होने पर यदि किसी के ऊपर एफ.आई.आर. भी दर्ज हुआ है तो उसे उस नौकरी से वंचित किया जाता है, किन्तु एक नेता बड़ा से बड़ा अपराध किया हो, उस पर पचासों अपराधिक केस न्यायालय में चल रहे हों, उसे चुनाव लड़ने और संसद पहुँचने में कोई रोक नहीं है। आज का यह लोकतंत्र कितना स्वच्छ, पवित्र और पारदर्शी हो गया है? लोकतांत्रिक प्रणाली एक अच्छा तथा स्वस्थ लोकतंत्र शासन कहा जाता है परन्तु भारत एक विशाल जनसंख्या वाला देश है। यहाँ लोकतंत्र सरकार स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से चल रही है। लोकतंत्रात्मक शासन के मूल्यों और मान्यताओं का यदि पूर्ण निर्वाह नहीं किया जाता तो वह विकृत होकर लोक कल्याणकारी समाज की स्थापना करने के स्थान पर जनहित विनाश का कार्य करने लगती है। समाज जाति, वर्ग, सम्प्रदाय, क्षेत्र, लिंग तथा न जाने कितने रूपों में बंटकर वर्ग संघर्ष को जन्म देता है। भारतवर्ष में जो धीरे–धीरे अपना पैर फैलाता दिखाई देने लगा है।

किसी भी समाज और राष्ट्र की चिन्तनशैली से, वैचारिक स्तर से यहाँ की सभ्यता, रहन–सहन, आचार–व्यवहार और जीवन क्रम की भविष्यत संभावनाओं की बारीकियों की जानकारी होती है। वैदिक युग कभी सतयुग नाम से पुकारा जाता था। उस युग के सभी प्राणी दैहिक, दैविक तथा भौतिक तापों से मुक्त और आनन्द का जीवन जीते थे। इसका कारण साफ है कि उस युग में वेद का पठन–पाठन होता था तथा वैदिक मान्यताओं तथा मूल्यों का पूर्ण रूपेण आदर और सम्मान किया जाता था। अवैदिक कार्य को पाप समझा जाता था। उस युग की चिन्तन पद्धति और वैचारिक स्तर उत्कृष्ट था। उस युग में शिष्य लोग श्रेष्ठ गुरु से श्रेष्ठ शिक्षा गुरुकुलों में रहकर साथ–साथ प्राप्त करते थे। वहाँ ऊँच–नीच, राजा–रंक का कोई भेद नहीं होता था।

आज भारतीय संविधान विधिवेत्ताओं के लिए स्वर्ग बन गया है। उसके प्रत्येक अनुच्छेद का अर्थ विधिवेत्ता स्वार्थ तथा स्वकल्याण के वशीभूत होकर अपने स्वहित हेतु व्याख्या करने लगे हैं। समाज जातियों, वर्गों में बढ़ता जा रहा है जिसका परिणाम लोग भलीभांति जानते हैं। किन्तु अपने भाषणों तथा वक्तव्यों में सत्यता पर धूल डालने का कार्य प्रत्येक दल का राजनीतिक नेता करता चला आ रहा है। अनेक समस्यायें देश के समक्ष जड़ें जमाती जा रही हैं। राष्ट्रीय जीवन शनैः–शनैः जर्जरित होता जा रहा है। आज के राजनेताओं में राष्ट्रभक्ति, सार्वजनिक कल्याण की भावना भाषणों तक सिमट गई है, एक–दूसरे पर कीचड़ उछालना कार्य मात्र रह गया है। आज का विधायक, सांसद, मंत्री तथा राज्यपाल आदि राजाओं तथा सम्राटों का जीवन जी रहे हैं। पूर्वकालीन राजाओं को आराम और विलासिता के मामले में पीछे छोड़ बहुत आगे बढ़ गये हैं। इन पर कानून लागू नहीं होता, न्यायालय के निर्णय को बदल देते हैं, क्योंकि कानून के निर्माता हैं। शायद इसीलिए नेताओं का वाणी पर कोई नियंत्रण नहीं है।

अतः आज कठोपनिषद् का संदेश भारतीय जनता के लिए अधिक प्रासंगिक हो गया है। यदि जनता बंटती रही तो समाज नष्ट हो जायेगा। इसलिए उठो, निद्रा, आलस्य त्याग कर राष्ट्र के कल्याण में लग जाओ।

– 2475 निराला नगर, शिवपुरी,
सुलतानपुर (उ. प्र.)

वैदिक नित्य कर्म विधि

– लेखक आचार्य श्री पं. हरिदेव आर्य एम.ए.

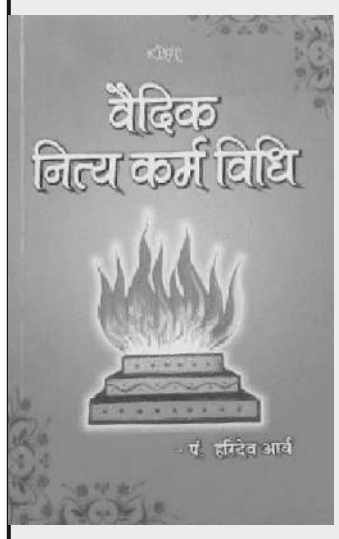

इस पुस्तक में प्रातःकाल के मन्त्र, संन्ध्या, ईश्वर स्तुति, प्रार्थना मंत्र, दैनिक यज्ञ, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण, विशेष यज्ञ और विशेष आहुतियाँ, अमावस्या, पूर्णिमा आदि के विशेष मन्त्र, ईश्वर प्रार्थना, पचास भजन संग्रह आदि के अतिरिक्त जन्मदिन, वर्षगांठ, सगाई, गोद भरना, वर तथा बारात का स्वागत, व्यापार का शुभारम्भ, भवन शिलान्यास, क्रिया सम्बन्धी (उठाला), यात्रा–गमन, शुद्धि संस्कार पद्धति, यजुर्वेद के 40वें अध्याय से युक्त सभी आर्यों के पर्वों के मन्त्र आर्य पर्व पद्धति भी सम्मिलित है। **विशेष बात यह है कि सब मन्त्र मोटे और लाल, सभी मन्त्र अर्थ सहित और कविता पाठ में भी और प्रत्येक मंत्र के आरम्भ में ओ३म् भी मुद्रित है।** 23x36 का बड़ा साईज, आकर्षक टाईटिल तथा पृष्ठ संख्या 176, संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण मूल्य एक प्रति 175 रुपये डाक व्यय अलग होगा।

बुक मंगाते समय यदि आप सीधे राशि भेजना चाहते हैं तो निम्न खाते में राशि भेजकर दूरभाष पर सूचित करें :–

मधुर प्रकाशन
खाता संख्या–0127002100058167
IFSC Code No.- PUNB0012700
पंजाब नेशनल बैंक, आसफ अली रोड, नई दिल्ली–2

मधुर प्रकाशन
2804, गली आर्य समाज,
बाजार सीताराम, दिल्ली–110006
मो.:–9810431857

पृष्ठ 3 का शेष

वेद ही क्यों

पाश्चात्य विद्वानों के सामने कदाचित् वेदों के काल को 6000 वर्ष से अधिक पीछे ले जाने में मानसिक बाधा है। मनोविज्ञान की दृष्टि से विचार करने पर इस मानसिक बाधा को पहचानने में देर नहीं लगती। वह मानसिक बाधा यह है कि बाइबिल के संकेत के अनुसार उनके मन में यह संस्कार बैठा हुआ है कि वर्तमान सृष्टि को बने केवल 6000 साल हुए हैं। उनके आन्तरिक मन्तव्य के अनुसार जब 6000 साल पहले सृष्टि ही नहीं थी तो कोई ग्रन्थ इससे पहले कैसे हो सकता है? वास्तव में तो पाश्चात्य विद्वानों द्वारा किसी चीज को 6000 साल पूर्व का कहने का अभिप्राय भी सृष्टि के आदि का समझना चाहिए, क्योंकि उनकी दृष्टि में 6000 वर्ष पूर्व ही सृष्टि का प्रारम्भ है, परन्तु विज्ञान की खोज ने बाइबिल द्वारा वर्णित सृष्टि के आगाज को मिथ्या सिद्ध कर दिया है और जब से रेडियम का आविष्कार हुआ है तब से वैज्ञानिकों को इस बात का निश्चय हो गया है कि सृष्टि को बने करोड़ों (लगभग दो अरब) वर्ष हो गये हैं, क्योंकि इससे कम अवधि में कार्बन रेडियम में रूपान्तरित नहीं हो सकता।

और क्या वेदों के निर्माण की अभी तक कोई तिथि निर्धारित न होना स्वयं इस बात की निशानी नहीं है कि यह सृष्टि के आदि की रचना है? परन्तु वेद को सृष्टि की आदि रचना मानना भी हमारे युक्ति क्रम का ऐसा अंग नहीं है कि इसके बिना हमारी स्थापना विश्रृंखलित हो जायेगी। संसार के लोग वेद को सृष्टि की आदि रचना मानें या न मानें, जब तक सब यह मानते हैं कि वेद संसार के पुस्तकालय का सबसे प्राचीन ग्रन्थ है तब तक हमारे युक्तिक्रम का प्रसाद अक्षुण्ण है। संसार का कोई धर्मग्रन्थ प्राचीनता में वेद की तुलना में खड़ा नहीं हो सकता। आर्य जाति के प्रारम्भ के साथ वेद प्रारम्भ हुआ, यदि किसी को इस स्थापना को स्वीकार करने में संकोच हो तो भी उसे इतना तो मानना ही पड़ेगा कि संसार के धर्मरूपी भवन की पहली ईंट वेद है।

अन्तः साक्षी का महत्त्व – आश्चर्य की बात यह है कि वेद के सिवाय संसार के किसी अन्य धर्मग्रन्थ ने सृष्टि के आदि में होने का दावा नहीं किया। करें भी कैसे? विभिन्न धर्मावलम्बी अपने धर्मग्रन्थों को ईश्वरीय ज्ञान तो सहज ही मान लेते हैं, परन्तु सृष्टि के आदि में अपने धर्मग्रन्थों की सत्ता सिद्ध करने की उनकी हिम्मत नहीं होती। सृष्टि के आदि में न होने पर भी अपने धर्मग्रन्थ को ईश्वरीय ज्ञान मानना परस्पर विरोधी बात ठहरती है। क्योंकि ईश्वरीय ज्ञान वही हो सकता है जो सृष्टि के आदि में हो। जिस परमात्मा ने मनुष्य को आँख दी है उसी ने सूर्य भी दिया है। सूर्य या सूर्य के प्रतिनिधि के बिना आँख देख नहीं सकती। यदि केवल आँख ही परमात्मा ने दी होती, सूर्य नहीं, तो आँख देना भी व्यर्थ था, क्योंकि प्रकाश के अभाव में आँख देखने का काम नहीं कर सकती थी। इसी प्रकार परमात्मा ने मनुष्य को अन्दर की आँख या बुद्धि दी तो उसकी सार्थकता के लिए वेद रूपी ज्ञान का सूर्य भी दिया, अन्यथा बुद्धि का दान व्यर्थ हो जाता। फिर सृष्टि बनने के हजारों साल बाद बनने वाले धर्मग्रन्थों में ही यदि ईश्वरीय ज्ञान प्रकट होना था तो उन धर्मग्रन्थों के प्रादुर्भाव से पहले मनुष्य जाति की जो सैकड़ों पीढ़ियाँ गुजर चुकीं उनको ईश्वर ने ईश्वरीय ज्ञान से वंचित क्यों रखा? वेद को छोड़कर किसी अन्य धर्मग्रन्थ को ईश्वरीय ज्ञान मानने वाले व्यक्ति के पास इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं हो सकता। ऐसा परमात्मा पक्षपाती सिद्ध होता है, अन्यायी भी, निर्दयी भी। ईश्वर को ऐसे आरोपों से बचाने का एक ही उपाय है कि मानवकृत ग्रन्थों को ईश्वारीय ज्ञान की कोटि में न रखा जाये।

वेद के सृष्टि के आदि में होने की अन्तः साक्षी स्वयं वेद देता है। ऋग्वेद (10.90.9) में मन्त्र आता है –

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।

यह मंत्र यजुर्वेद (31, 7) में भी आया है। भावार्थ है – ''उसी सर्वपूज्य परमात्मा से ऋग्, साम, अथर्व और यजुर्वेद उत्पन्न हुए।''

अथर्ववेद (10.23.4, 20) में मंत्र आता है –

यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्
सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखम्।
स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः।

– ''जिस जगदाधार परमात्मा से ऋग्, यजु., साम और अथर्व उत्पन्न हुए उसका यथार्थ स्वरूप बताओ।''

यदि मानव जीवन के लिए वेद की इतनी उपयोगिता न होती तो भारत के ब्राह्मणों ने अपने प्राण देकर भी उनकी रक्षा का प्रयत्न न किया होता, वेदों को कण्ठाग्र करना अपने जीवन का लक्ष्य न बनाया होता और ''ब्राह्मणेन निष्कारणं षडङ्गो वेदोऽध्येयः'' के नियम के अनुसार बिना किसी भौतिक लाभ की आशा के वेदों के पठन–पाठन में ही अपना समस्त जीवन न लगाया होता। न ही चतुर्वेदी, त्रिवेदी या द्विवेदी की वंशपरम्परा चली होती। न ही भारतवर्ष ने अतीतकाल में ज्ञान–विज्ञान में इतनी उन्नति की होती। न ही आज देश–विदेश के विद्वानों ने इतनी बड़ी संख्या में वेद के स्वाध्याय में अपना जीवन खपाया होता।

अब तक हमने जो कुछ कहा है उसका सार यह है : संसार के धर्मग्रन्थों में कुछ बातों में समानता पाई जाती है। उस समानता का कोई एक आधार होना चाहिए। वह आधार वेद ही हो सकता है क्योंकि वही सबसे प्राचीन है। इतना ही नहीं, ईश्वरीय ज्ञान के दावे की कसौटी को भी वेद ही पूरा कर सकता है, क्योंकि ईश्वरीय ज्ञान की एक कसौटी है – सृष्टि के आदि में होना और यह शर्त सिवाय वेद के और कोई धर्मग्रन्थ पूर्ण नहीं कर सकता।

नास्तिकों के लिए भी उपयोगी – यह समस्त विवेचन केवल आस्तिक और धार्मिक लोगों की दृष्टि से किया गया है। जो धर्म को मनुष्य जाति के लिए अफीम बताते हैं उनकी किसी भी धर्मग्रन्थ में आस्था नहीं। ईश्वर में ही आस्था नहीं तो धर्म या धर्मग्रन्थ को लेकर क्या होगा?

परन्तु अब हम कहते हैं कि वेद नास्तिकों और धर्म विरोधियों के लिए भी उतना ही उपयोगी है जितना धर्म प्रेमियों के लिए। नास्तिक लोग भी विज्ञान और विज्ञानेत्तर विषयों की पुस्तकें तो पढ़ते ही हैं। हम कहते हैं कि वेद केवल धर्मग्रन्थ नहीं है, वह विज्ञान और विज्ञानेतर विषयों का भी अगाध भण्डार है। वह समस्त सत्य विद्याओं का आगार है। मानव जीवन के लिए जो भी कुछ उपयोगी है, उस सबका निदर्शन वेद के अन्दर है। अन्य धर्मग्रन्थों में से उन मतों के प्रवर्तकों का जीवन–वृत्त निकाल दीजिए, उन महान् पुरुषों के जीवन के साथ दन्तकथाओं के रूप में जुड़े आख्यानों को निकाल दीजिए, सामाजिक विधि–विधानों के सम्बन्ध में देश–काल और परिस्थिति के अनुसार दी गई व्यवस्थाओं को निकाल दीजिए, तो आप देखेंगे कि उन धर्मग्रन्थों में इसके बाद जो कुछ बचता है वह नगण्य है या ऐसा कुछ है जिसे उससे पूर्ववर्ती धर्मग्रन्थ कह चुके हैं। धर्मग्रन्थों की इन्हीं व्यक्तिवादिताओं और दुर्बलताओं को देखकर तो अधर्मियों को उनसे अश्रद्धा हुई है, परन्तु वेद में किसी व्यक्ति विशेष का, देश–विशेष का या काल–विशेष का इतिहास नहीं, वहाँ तो शाश्वत इतिहास है। अन्य मत–मतान्तरों में से उन मतों के प्रर्वतकों को निकाल दें तो वे मत धराशायी हो जाते हैं क्योंकि वे अपने पैगम्बरों के बिना नहीं टिक सकते, परन्तु वेद के साथ ऐसी बात नहीं। किसी भी व्यक्ति पर आधारित नहीं है। वेद समस्त मनुष्य जाति के लिए है। सच तो यह है कि वेद व्यक्तिपरक है ही नहीं, वह तो ज्ञानपरक ही है। वेद शब्द का अर्थ भी सिवाय ज्ञान के और कुछ नहीं है। सांसारिक ज्ञान की पुस्तकों में केवल ऐहिक ज्ञान का विवेचन होगा, परन्तु वेद में ऐहिक के साथ पारलौकिक ज्ञान, भौतिक के साथ आध्यात्मिक ज्ञान और अभ्युदय के साथ निःश्रेयस का भी विवेचन है।

यदि मानव जीवन के लिए वेद की इतनी उपयोगिता न होती तो भारत के ब्राह्मणों ने अपने प्राण देकर भी उनकी रक्षा का प्रयत्न न किया होता, वेदों को कण्ठाग्र करना अपने जीवन का लक्ष्य न बनाया होता और ''ब्राह्मणेन निष्कारणं षडङ्गो वेदोऽध्येयः'' के नियम के अनुसार बिना किसी भौतिक लाभ की आशा के वेदों के पठन–पाठन में ही अपना समस्त जीवन न लगाया होता। न ही चतुर्वेदी, त्रिवेदी या द्विवेदी की वंशपरम्परा चली होती। न ही भारतवर्ष ने अतीतकाल में ज्ञान–विज्ञान में इतनी उन्नति की होती। न ही आज देश–विदेश के विद्वानों ने इतनी बड़ी संख्या में वेद के स्वाध्याय में अपना जीवन खपाया होता।

जैसे हिमालय का सर्वोच्च शिखर मानवात्मा को चुनौती देता है, जैसे महासागर की गहराइयाँ वैज्ञानिकों का आह्वान करती हैं, जैसे मंगल और चन्द्रमा आदि ग्रह–उपग्रह किसी साहसी अन्तरिक्ष यात्री की प्रतीक्षा करते हैं और मानव की चिर–जिज्ञासु आत्मा उस चुनौती को स्वीकार कर अज्ञात के अनन्त रहस्यों को खोजने के लिए अपने विजय पथ पर निकल पड़ती है, वैसे ही क्या ज्ञान का यह सर्वोच्च शिखर, ज्ञान का यह महासागर, ज्ञान का यह सूर्य वेद भी मानव की बुद्धि और परिश्रम के लिए चुनौती नहीं है? किसी नास्तिक के लिए भी इस अज्ञात को सुज्ञात बना देने से बढ़कर जीवन की कृतकार्यता और क्या हो सकती है? ज्ञान का भण्डार वेद ज्ञान के नए आयाम अपने पक्ष में छिपाए साहसी व्यक्तियों की प्रतीक्षा में है।

– आर्योदय 'हिन्दी साप्ताहिक' के वेदांक से साभार

ओ३म्

स्थापना 3 जून 1978

जहां नहीं होता कभी विश्राम, आर्य युवक परिषद् है उसका नाम ...

यदि आप आर्य युवा शक्ति की कार्यप्रगति की एक झलक देखना चाहते हैं तो अवश्य पधारें

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् (पंजीकृत)

41 वाँ वार्षिक राष्ट्रीय अधिवेशन

बलमुपास्व

अध्यक्षता: डॉ. अशोक कुमार चौहान जी
(संस्थापक अध्यक्ष, ऐमिटी शिक्षण संस्थान)

सानिध्य: स्वामी आर्यवेश जी
(प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा)

राष्ट्रीय आर्य बुद्धिजीवी सम्मेलन

रविवार, 1 सितम्बर 2019, प्रातः 9 से सायं 5 बजे तक

स्थान: योग निकेतन सभागार, 30-ए/78, पश्चिमी पंजाबी बाग, दिल्ली-26

यज्ञ: प्रातः 9.00 से 10.00 बजे तक - ब्रह्मा: आचार्य गवेन्द्र शास्त्री जी

विशेष आकर्षण

राष्ट्र की ज्वलन्त समस्याओं धारा 370, समान अचार संहिता, गौ रक्षा, जनसंख्या नियन्त्रण कानून में आर्य समाज की भूमिका पर वैदिक विद्वानों के ओजस्वी विचार
देश के विभिन्न प्रान्तों से चुने हुए आर्य युवा प्रतिनिधियों का भव्य समागम

प्रातः राशः प्रातः 8 से 10 तक, ऋषि लंगर 1 से 2 तक, जलपानः सायं 5.00 से 5.30 तक

आप सपरिवार इष्ट मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं

केन्द्रीय कार्यालय: आर्य समाज, टी-176-177, कबीर बस्ती, पुरानी सब्जी मंडी, दिल्ली-110007
E-mail: aryayouth@gmail.com, dkbhagat@gmail.com Website: www.aryayuvakparishad.com
join-http://www.facebook.com/groups/aryayouth/ दूरभाष: 9868051444,9958889970, 7703922101

वैदिक सार्वदेशिक के सदस्यों से निवेदन

वैदिक सार्वदेशिक पत्रिका के उन ग्राहकों से विनम्र निवेदन है जिनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो चुका है। वे शीघ्र अपना वार्षिक शुल्क 250/- रुपये सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में भिजवाने की व्यवस्था करें, अन्यथा भविष्य में उन्हें नियमित रूप से पत्रिका भेज पाना सम्भव नहीं हो सकेगा, और उनका नाम ग्राहक सूची से हटा दिया जायेगा। वैदिक सार्वदेशिक का वार्षिक शुल्क 250/- रुपये एवं आजीवन शुल्क 2500/- रुपये है। जो महानुभाव इस पत्रिका को मंगाना चाहें वह उपरोक्त राशि चैक/ड्राफ्ट अथवा धनादेश द्वारा ''सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा'' के नाम से सभा कार्यालय ''महर्षि दयानन्द भवन'' 3/5, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-2 के पते पर भेजें। देश-विदेश में हजारों की संख्या में भेजे जाने वाले वैदिक सार्वदेशिक को प्रति सप्ताह अपने घर पर प्राप्त करने के लिए शीघ्र सम्पर्क करें।

- व्यवस्थापक, वैदिक सार्वदेशिक

पंजीयन संख्या DELMUL/2005/15488
डाक पंजीकरण संख्या DL(c)-01/1213/18-20
Licence to Post without prepayment of Postage. [U (c)-289/2018-20]

सोशल मीडिया के माध्यम से स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ें

आर्य युवा सन्यासी व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ने के लिए इस लिंक पर क्लिक करें
www-facebook-com/SwamiAryavesh व फेसबुक पेज को लाइक करें व अन्य मित्रों को भी प्रेरित करें।
ई-मेल : aryavesh@gmail.com
Tel. :-011-23274771

प्रतिष्ठा में :–

अवितरण की दशा में लौटाएँ –
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
"दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

आर्य समाज सेक्टर 33 नोएडा में श्रावणी पर्व के अवसर पर वेदारम्भ संस्कार का किया गया भव्य आयोजन

शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन कर गुरुकुलीय शिक्षा को अपनाने की महती आवश्यकता

– स्वामी आर्यवेश

आर्य संस्कृति पर हमें गर्व होना चाहिये – अनिल आर्य

रविवार 4 अगस्त 2019, आर्य समाज सेक्टर 33 नोएडा में श्रावणी पर्व सोल्लास मनाया गया। ब्रह्मचारियों का यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा वैदिक विद्वान डॉ जयेन्द्र आचार्य ने यज्ञ की महिमा और यज्ञोपवीत की महत्ता पर प्रकाश डाला।

पदम्भूषण से विभूषित आर्य जगत के भामाशाह महाशय धर्मपाल एवं श्री विनय आर्य ने कार्यक्रम में सम्मिलित होकर नया उत्साह पैदा कर दिया। इस अवसर पर महाशय जी ने गुरुकुल के लिए आर्थिक सहयोग प्रेषित किया तथा ब्रह्मचारियों को अपना आशीर्वाद प्रदान किया। गुरुकुल की कार्यकारिणी ने महाशय जी का स्मृति चिन्ह, शॉल एवं श्रीफल भेंटकर सम्मान किया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्य वेश ने कहा की उपनयन संस्कार के पश्चात ब्रह्मचारी आचार्य के सानिध्य में रह कर शिक्षा का शुभारंभ करता है। जो उसके जीवन को सर्वोच्च ऊचाइयों पर ले जाते हैं। उन्होंने कहा कि गुरुकुलीय शिक्षा आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है, क्योंकि आज की शिक्षा व्यवस्था मैकाले की देन है जिसमें केवल कार्यालयों के बाबू बनाने की क्षमता है। इस शिक्षा में संस्कारों का कोई स्थान नहीं है। उन्होंने कहा कि गुरुकुलीय शिक्षा में बालक अपना सारा समय गुरुकुल के प्रांगण में अपने गुरु की छत्र–छाया में बिताता है। प्रातः से लेकर रात्रि तक सारे क्रिया कलाप अत्यन्त अनुशासित तथा गुरु के निर्देशानुसार नियमबद्ध ढंग से चलते हैं। गुरु अपने शिष्यों को शिक्षा के साथ–साथ महत्त्वपूर्ण नैतिक शिक्षाओं के अतिरिक्त संस्कारित भी करते हैं और यह संस्कार बच्चे को अपने जीवन में अत्यन्त उच्च स्तर तक पहुँचाने का कार्य करते हैं। इन संस्कारों के कारण बच्चा ईमानदारी, अनुशासन, परिश्रम, निष्ठा, देशभक्ति, माता–पिता का सम्मान तथा अन्य मानवीय गुणों को सीखकर अपना तथा अपने समाज को उत्कृष्टता तक ले जाने का कार्य करता है। आज के समय के विषाक्त वातावरण का सबसे बड़ा कारण बच्चों का संस्कारित न होना ही है। स्वामी जी ने आर्य समाज नोएडा के पदाधिकारियों का साधुवाद किया और कहा कि उन्होंने अपने समाज में उच्च स्तरीय गुरुकुल प्रारम्भ करके एक अनुकरणीय कार्य किया है।

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष अनिल आर्य ने कहा की पुरातन भारतीय संस्कृति पर हमें गर्व करना चाहिए यह सदैव नई प्रेरणा और उत्साह का संचार करती है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम और कृष्ण हमारी संस्कृति के आधार स्तंभ है।

इस अवसर पर डॉ वीरपाल विद्यालंकार, बहिन गायत्री मीना, मनोहरलाल सरदाना, विजेन्द्र कथपालिया, सुधीर सिंघल ने भी अपने विचार रखे।

प्रसिद्ध भजनोपदेशक कुंवर सुखपाल आर्य का निधन

प्रसिद्ध भजनोपदेशक, अनेक पुस्तकों के रचयिता, लेखक, गायक श्री कुंवर सुखपाल आर्य (मुजफ्फरनगर) का 5 अगस्त, 2019 को 4 बजे निधन हो गया। 7 अगस्त, 2019 को पाल धर्मशाला में उनकी स्मृति में शांति यज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुजफ्फरनगर की विभिन्न आर्य समाजों, आर्य समाज नई मण्डी, आर्य समाज गांधी कालोनी, आर्य समाज शहर के सदस्यों सहित अनेकों गणमान्य व्यक्तियों ने उपस्थित होकर कुंवर सुखपाल जी को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

इस अवसर पर विभिन्न वक्ताओं ने कुंवर सुखपाल आर्य के जीवन के संस्मरण तथा उनके द्वारा विपरीत परिस्थतियों में किये गये आर्य समाज के प्रचार कार्यों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

मृत्यु से कुछ समय पूर्व लिखे गये कुंवर सुखपाल आर्य के संक्षिप्त जीवन परिचय से आज के उपदेशकों तथा भजनोपदेशकों की स्थिति का सटीक परिचय प्राप्त होता है। कृपया इस जीवन परिचय को गम्भीरता से पढ़ें, मनन करें तथा तद्नुकूल आचरण करें।

माह कृष्ण पक्ष 4 अर्थात् संकटमोचन चतुर्थी तद्नुसार 23 जनवरी, 1930 को एक भूमिहीन गरीब श्री शंकरलाल जी व माता भागवती जी के यहां ग्राम करौदा हाथी, जिला–मुजफ्फरनगर (उ. प्र.) में मेरा जन्म हुआ। माता–पिता ने सुखपाल नाम रखकर भौतिक जगत को मेरी पहचान बताई। सन् 1942 में 11 वर्ष के बालक को वीतराग पद्मभूषण श्री स्वामी कल्याणदेव जी को माता–पिता ने गुरुकुल के लिए सौंप दिया। गुरुकुल कांगड़ी की शाखा गुरुकुल घासीपुरा जिला मुजफ्फरनगर में 2 वर्ष निःशुल्क विद्या ग्रहण की। फिर विद्यार्थियों को शिक्षा ग्रहण हेतु 10 रुपये प्रतिमाह कर दिया। मेरी पढ़ाई अवरोधक हो गई। मैं वहीं गुरुकुल में फिर 4 रुपये प्रतिमाह सेवक बन सारा दिन कार्य करता। अवकाश निकाल प्रातः रात्रि में पढ़ता। अचानक पाचक के भागने पर मैं पाचक का कार्य भी करने लगा। फिर वेतन 11 रुपये प्रतिमाह हो गया। उसी गुरुकुल में 5वीं मिडिल प्रथमा एवं प्रभाकर अच्छे नम्बरों से उत्तीर्ण की। इसी बीच हर वर्ष गुरुकुल के वार्षिकोत्सव एवं अन्यत्र जहाँ भी मौका मिलता अपने एवं अन्य वैदिक कवियों के भजन गीत गाता। एक बार पं. रामचन्द्र देहेलवी शास्त्रार्थ महारथी जी ने मुझे एक रुपया चांदी का मंच पर एक गीत पर देकर उत्साहित किया। तभी से मेरा नाम कुंवर सुखपाल आर्य हो गया। ग्यारह वर्षों के बाद गुरुकुल से निकल कर अपना सामाजिक जीवन शुरू किया। 1951 में मार्केटिंग रीजनल फूड कन्ट्रोल में लिपिक के पद पर 55 रुपये प्रतिमाह राजकीय सेवा में पदार्पण किया। शीघ्र ही मैंने पदोन्नति प्राप्त कर सहायक मार्केटिंग इन्सपेक्टर का पद प्राप्त कर गया। 82 रुपये प्रतिमाह वेतन हो गया। सन् 1954 से 55 तक चौ. पृथ्वी सिंह बेधड़क के पास रहकर भजनोपदेश का कार्य सीखा। सन् 1955 में गुरु जी को अपने गांव में बुलाकर 4 दिन वैदिक यज्ञ वैदिक प्रचार कराकर बेधड़क जी को गुरुदक्षिणा दी।

उसके बाद निरन्तर 1955 से अपनी भजन मण्डली बना वैदिक प्रचार के साथ हिन्दी रक्षा आन्दोलन, गऊ रक्षा आन्दोलन में भाग लिया। अपने गाँव में आर्य समाज भी स्थापित की। सन् 1965 में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष लाला राम गोपाल जी शाल वालों को बुलाकर अपने गांव करौदा हाथी में आर्य समाज की स्थापना एवं एक विशाल आर्य महासम्मेलन तीन दिन का मनाया। सन् 1965 में चीनी अटैक पर पं. जवाहर लाल नेहरू जी प्रधानमंत्री जी द्वारा नेफा मोर्चे पर आर्य समाज की चार भजन मण्डली पं. प्रकाशवीर शास्त्री जी के प्रयास से भेजी गई थी। उसमें मेरा भी नम्बर आया। 24 दिन निःस्वार्थ सेना के जवानों में जोशीला प्रचार सीमाओं पर किया। तीन लड़के मुस्लिम अपने पास रखकर आर्य उपदेशक बनाये। 27 पुस्तकें इतिहासों फुटकर गीतों की समय–समय पर लिखी। अनेकों शिष्य मण्डली नई तैयार की। जैसे आसाराम प्यारेलाल, घनश्याम प्रेमी, नरेश निर्मल, राजपाल सैनी अन्य अनेकों शिष्य तैयार किये। घर में चार पुत्र एक पुत्री हैं। बेटी की शादी शहर ऋषिकेश में की। बेटे तीन गुरुकुल ततारपुर करतार में पढ़ाये। बड़ा बेटा सुभाष राही दूसरा सतीश सुमन दोनों आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में भजनोपदेशक पद पर हैं। तीसरा बेटा सुनील दत्त शास्त्री फिरोजपुर शहर पंजाब में दो आर्य समाजों का पुरोहित है। चौथा बेटा सत्यकाम आर्य बी.कॉम. हेल्थ क्लब का बॉडी बिल्डर शादीशुदा बेरोजगार है। 45 वर्ष किराये के मकानों में रहा। 4 वर्षों से बड़ा बेटा सुभाष जी ने 50 गज में 2 कमरे बैठक बनाये। मैं मेरी पत्नी बेटा सुभाष राही सत्यकाम विद पत्नी सतीश सुमन विद पत्नी ससुराल में रहता है। सुनील दत्त शास्त्री सपरिवार पंजाब फिरोजपुर में रहता है। करीब 8 वर्षों से मुम्बई सांताक्रूज आर्य समाज से एक हजार रुपये प्रतिमाह विद्वत् निधि से निरन्तर सहयोग मिल रहा है। मेरे नाम से आज भी कोई चल–अचल सम्पत्ति नहीं है। अब 84 वर्ष की आयु में उत्सव आने बन्द हो गये हैं। स्वास्थ्य ठीक साथ दे रहा है, कोई बुलाता है तो प्रचार अब भी कर लेता हूँ। मात्र एक हजार रुपये ही आय का साधन है, ये मेरे जीवन की सफलता रही है। कष्ट के लिए धन्यवाद।

प्रो० विट्ठलराव आर्य, सभा मंत्री, प्रकाशक व मुद्रक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, 3/5 महर्षि दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान/आसफ अली रोड), नई दिल्ली-110002
के लिए प्रकाशित तथा ज्योति प्रिंटिंग प्रेस, ई-94, सैक्टर-6, नोएडा-201301 से प्रकाशित एवं मुद्रित। (फोन : 011-23274771, 23260985 टेलीफैक्स : 23274216)
सम्पादक : प्रो० विट्ठलराव आर्य (सभा मन्त्री) मो.:0-9849560691, 0-9013251500 ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in, sarvadeshikarya@gmail.com वैबसाइट : www.vedicaryasamaj.com
वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक में छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक या सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सैद्धान्तिक मतैक्यता होना अनिवार्य नहीं है।